समरथ

नवंबर 2013 से फरवरी 2014 ◆ नई दिल्ली

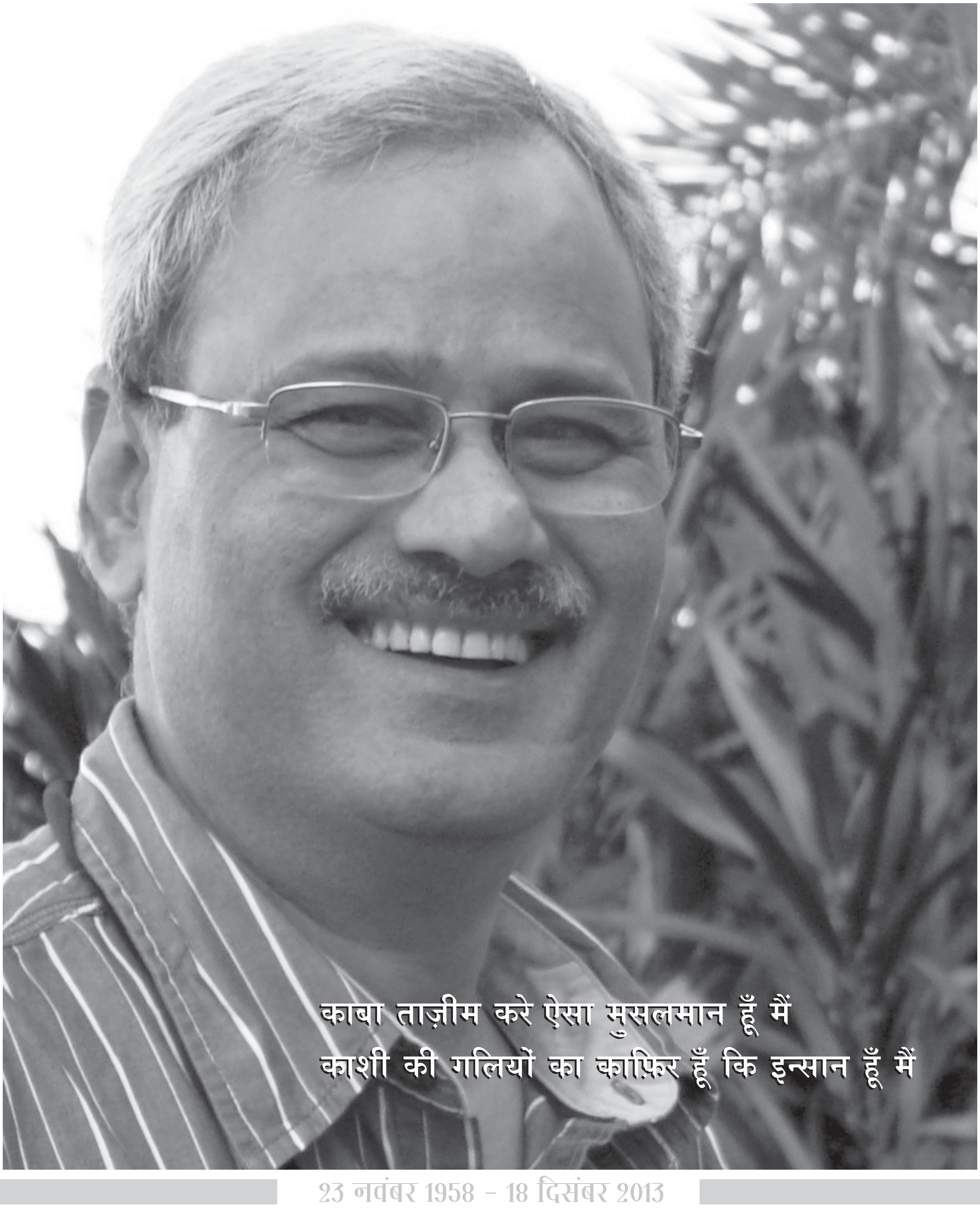

23 नवंबर 1958 – 18 दिसंबर 2013

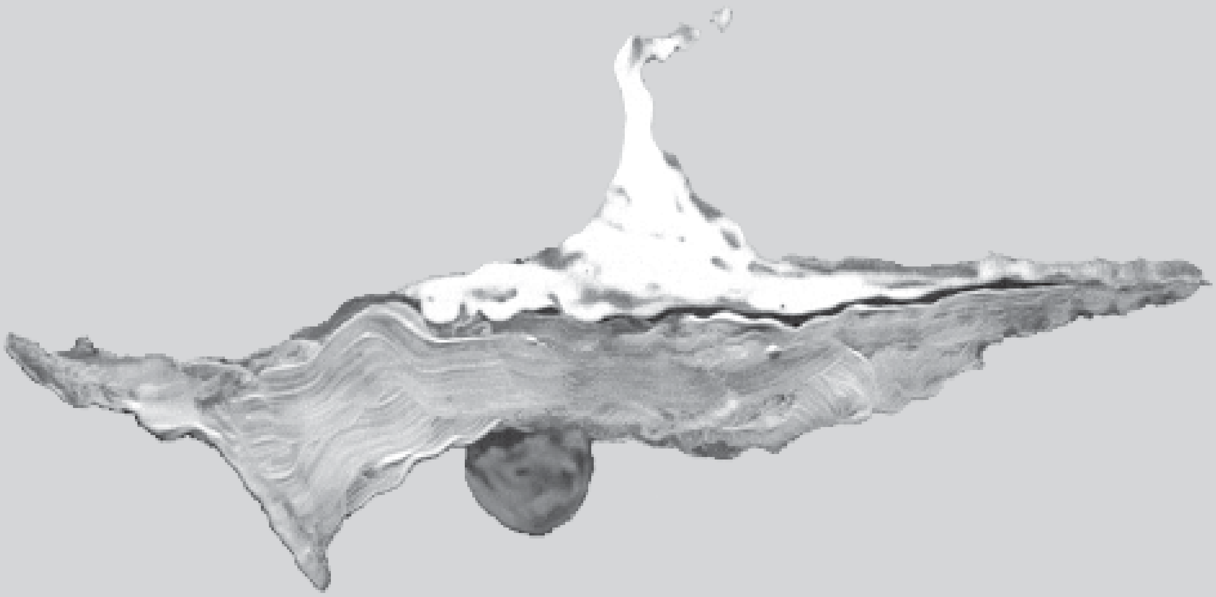

बख़्शा मुझे तूने वजूद, मेरे ख़ुदा मेरे ख़ुदा
हर दर्द की तू है दवा, मेरे ख़ुदा मेरे ख़ुदा
रहमत की बारिश भी है तू, ख़ुशियाँ भी तेरे नाम से
...तू रोशनी, तू ज़िन्दगी, दानिशक़दा मेरे ख़ुदा
है तेरे आब-ओ-ताब से बख़्शिश गुनाहों को मेरे
रस्ता दिखा और इल्म दे मेरे ख़ुदा मेरे ख़ुदा

गायत्री मंत्र—
"ॐ भूर्भुवः स्वः
तत सवितुर्वरेण्यं
भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात।।"
का भावानुवाद

—ख़ुर्शीद अनवर

नाहि तो जनम नसाई

समरथ का यह अंक हम उस शख़्स के बगैर निकाल रहे हैं जिसने रुच-रुच के इसे सजाया संवारा। 2013 के आख़िरी महीनों के दुर्भाग्यपूर्ण और त्रासद घटनाओं की परिणति थी 18 दिसंबर 2013 को ख़ुर्शीद अनवर की मौत।

इस मौत ने एक संगठन के रूप में आईएसडी को हिलाकर रख दिया। संस्था के लिए वे 'पीर, बावर्ची, भिश्ती, खर' यानी एक टोटल पैकेज थे। हमें दीन-दुनिया से बाख़बर करने वाले, रास्ता दिखाने वाले, संस्था में नए आयाम जोड़ने वाले एक हमदर्द दोस्त जिनके साथ हम सब ठठा कर हंस सकते थे, गीत गुनगुना सकते थे, तुलसी और ग़ालिब के दीवान सुन सकते थे, गप्पें हाँक सकते थे, मुग़ल-ए-आज़म के संवाद फरमाइशों पर सुन सकते थे, कट्टरपंथी सोच को पानी पी-पी कर कोस सकते थे, उसकी चीर-फाड़ कर सकते थे... अब ये सब हमारे पास नहीं है पर फिर भी हमें आगे बढ़ना है, लड़ना है।

हमें लड़ना है देश, समाज को एक चश्मे से देखने का आग्रह करने वाली सोच और इसके नुमाइंदों से।

ख़ुर्शीद ने जहां हमें छोड़ा हमें वहाँ से आगे का सफर तय करना है। उनकी लड़ाई, उनके सपनों को आगे लेकर चलना है। ये एक मुश्किल वादा है पर... करना तो होगा।

समरथ का यह पन्ना हमेशा उनके लिखे संवरा। आज पहली बार ख़ुर्शीद के बगैर यह पत्रिका पूरी हो रही है। यह अंक उनकी यादों को समर्पित है, जैसा ख़ुर्शीद के दोस्तों, सहकर्मियों ने उन्हें देखा, उन्हें पाया...

डॉ. ख़ुर्शीद अनवर : नातमाम यादें

■ **इमरान मुनव्वर**
पाकिस्तान

उनके बारे में मेरी शुरुआती यादें मरहूम महबूब सदा (सी.एस.सी. के पूर्व निदेशक) और सुश्री रोमाना बशीर (भूतपूर्व स्टाफ सदस्य सी.एस.सी.) की बातचीत के दौरान उनके ज़िक्र की है। यह बातचीत हमेशा एक ऐसे शख़्स के बारे में होती थीं जो पाए का विद्वान था और फिर भी इतना मिलनसार, उन तक आसानी से पहुंचा जा सकता था।

मेरे पूर्व सहकर्मी जावेद शरीफ साझी विरासत के एक प्रशिक्षण में शामिल होने ढाका गए जिसे ख़ुर्शीद फेसिलिटेट कर रहे थे। वापसी में, वे भी इस दानिशमंद इंसान के लिए भरपूर तारीफ़ से भरे लौटे जिसने 'साझी विरासत' इस तसव्वुर को अमली जामा पहनाया। स्वाभाविक तौर पर इन सभी चीज़ों ने मेरी उत्सुकता और उनसे मिलने की मेरी ललक में इजाफ़ा किया, उन्हें सुनना और साझी विरासत के बारे में उनसे जानने की ललक। मुझे ज़्यादा इंतज़ार नहीं करना पड़ा क्योंकि जब अगली अंतर्राष्ट्रीय कार्यशाला 2008 में नेपाल में करने की योजना बनी तो मैं उसका हिस्सा था। जब हम काठमांडू के अंतर्राष्ट्रीय एयरपोर्ट पर पहुंच अपने सामान आने का इंतज़ार कर रहे थे कि अपने कंधों पर बैकपैक साधते हुए जावेद नमूदार हुआ। वह खुशी से छलक रहा था। और खुशी की वजह थी कि एयरपोर्ट पर उसकी मुलाकात डॉ. ख़ुर्शीद अनवर से हो गई थी, वह हमें उनसे मिलाने ले गया। यह काठमांडू एयरपोर्ट के अंतर्राष्ट्रीय लाउंज के अनगिनत आम चेहरों में से एक था, मैंने पहली बार डॉ. ख़ुर्शीद अनवर को देखा वे सफेद टी-शर्ट और नीली डेनिम पहने थे। उनकी युवा लड़कों सी शक्ल और गर्माहट भरी मुस्कान के पीछे एक गहरी उद्विग्नता थी। जैसे उनमें एक गहरी ललक थी - जो शायद उनके आदर्शवाद और व्यावहारिकता के तीखे परिणामी संघर्ष से उपजी हो। प्रशिक्षण के दौरान मुझे वह वजह समझ में आई कि क्यों उनसे मिलने वाले उन्हें इस कदर प्यार करने लगते थे और उनका सम्मान करते थे। अपने विषय पर उनकी पकड़ का कोई सानी नहीं था और दक्षिण एशिया के इतिहास और प्रासंगिक यथार्थ की उनकी जानकारी ज़बर्दस्त थी। सामाजिक ऐतिहासिक विश्लेषण को आज के संदर्भों से जोड़ पाने की उनकी काबिलियत लाजवाब थी और कहा जा सकता है कि उनका सतत आशावाद एक ही साथ संक्रामक और महान था।

नेपाल में हुई इस पहली मुलाक़ात के बाद मुझे उनसे तीन दफ़ा और मिलने का मौका मिला, दो बार ढाका में और एक बार काठमांडू में। अपनी हर मुलाक़ात में मैंने उनका बौद्धिक कद और ऊंचा और उन्हें ज़्यादा मानवीय पाया। वे जम्हूरियत, शांतिवाद और मानवीयता के झंडाबरदार थे। जहां तक लोगों को पढ़ने और समझने की बात है, मैं खुद को कच्चा मानता हूँ पर डॉ. ख़ुर्शीद अनवर के मामले में अपने सीमित अनुभव और जानकारी के बाद भी मैंने एक सीमा तक यह पाया कि अपनी लापरवाह और ख़ुशमिजाज़ मनोवृत्ति के पीछे वे एक बाग़ी तेवर वाले बेचैन रूह थे। मेरी जाती राय यह है कि अगर उन्होंने समाज और इंसानियत के लिए अपनी जवाबदेही और

ज़िम्मेदारी को न समझा होता तो वे पूरे तौर पर एक संतुष्ट और घुमक्कड़ इंसान होते। जुलाई 2013 में काठमांडू में प्रशिक्षण के दौरान हुई अपनी आख़िरी मुलाक़ात में मैं अक्सरहां शाम में उनके पास जाता था। और हम ढेर सारी बातें करते थे। ऐसी ही एक शाम उन्हें एक मज़ेदार वीडियो का ख़्याल हो आया जो उन्होंने सोशल मीडिया पर देखा था जिसमें एक मिस्री 'इस्लामिक विद्वान' ने इस तथ्य को झूठा ठहराया था कि धरती गोल है। उसके अनुसार नासा की शिरकत से अंतरिक्ष से लिए चित्रों के माध्यम से इसे गोल दिखाने की कोशिश एक पश्चिमी प्रचार है। वे एक तथाकथित धार्मिक विद्वान की इस घोषणा का काफी मज़ा ले रहे थे। बाद में उन्होंने मुझे अपने फेसबुक पेज पर यह भी दिखाया कि वे भारतीय मुसलमानों के बीच किस कदर अलोकप्रिय हैं कि लोगों ने उन्हें कुटिल और धर्मत्यागी तक कहा है, कि अगर उन्होंने अपने विचारों को बदला नहीं तो लोगों ने उन्हें सबक सिखाने और मारने की भी धमकी दी है। मैं स्वाभाविक तौर पर उनकी लापरवाही और आत्मतुष्ट झुकाव को लेकर असहज था; मैं चकित था कि कैसे एक अकेला आदमी इतने सारे मोर्चों पर जूझ कर भी अपना संयम और शांति बनाए रख सकता है। मुझे ज़्यादा देर तक चकित नहीं रहना पड़ा क्योंकि उन्होंने दूसरे मुद्दे पर चर्चा छेड़ दी जो उनके दिल के बहुत करीब था और उनके चेहरे पर एक गहरी चमक और उल्लास ले आता था। यह था शायरी और अदब से उनका प्यार। उन्होंने मुझे बताया कि तनावरहित होने और दुनियावी परेशानियों को दूर करने का उनका सबसे अच्छा तरीका है शायरी में डूब जाना। उनके लिए शायरी सबसे बड़ी तसल्ली थी। अच्छी शायरी पढ़ना और खुद भी शायरी करना इसका वे भरपूर लुत्फ लेते थे। और मैं सोचता हूं कि यह कुदरती झुकाव था क्योंकि अनेक मामले में उनकी रचनात्मकता एक बेहद आला दर्जे की दूसरी रचनात्मकता को जन्म देती थी।

उनसे अपने जुड़ाव का मुझे फ़ख्र है। उनमें बड़ी ख़ास और कमाल की काबिलियतें थीं। एक महत्वपूर्ण और प्रेरणादायी ज़िंदगी। वे एक माकूल शख़्स थे और जिससे भी मिलते थे अपनी आज़ादख़्याली, दिल की उदारता, सहनशीलता और जीवन के प्रति अपने नज़रिये से उसके लिए ख़ास बन जाते थे।

जश्न साझी विरासत का

■ **एडा**
जर्मनी

आठवें दशक के शुरुआती साल थे जब हिंदुस्तान और यहां की तमाम सामाजिक सक्रियता से मेरा परिचय हुआ, यहां एक्टिविस्टों के प्रशिक्षण और क्षमता वृद्धि को काफी महत्व दिया जाता था जिससे मैं बहुत प्रभावित हुई थी। सामाजिक बदलाव की रफ्तार बढ़ाने में जुटे लोग इसकी अहमियत का पूरा ख्याल रखते थे। वे चाहे जितने भी कामचलाऊ रहे हों पर उनका अस्तित्व इस समझ पर टिका था कि विश्लेषण और चिंतन सफल सामाजिक संघर्षो की तालियां हैं। मार्क्सवादी सामाजिक विश्लेषण से प्रभावित भारतीय समाज की समझ के लिए वर्ग केंद्रीय श्रेणी थी। नारीवादी धड़ा लगातार इस मुश्किल कोशिश में जुटा था कि जेंडरगत असमानता और पितृसत्ता को भी इस परिधि में शामिल किया जाए और दलित एक्टिविस्ट का दावा था कि यथार्थ जो शोषण, हिंसा और सामाजिक अलगाव से भरा पड़ा है, को बदलने और समझने में जाति एक निर्णायक श्रेणी है।

दक्षिण एशियाई सामाजिक एक्टिविस्ट्स सामाजिक विश्लेषण में एक सर्वनिष्ठ नज़रिया लेकर चल रहे थे जबकि अभी भी यह शब्दावली सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण और गहन चिंतन का विषय नहीं बन पाई थी।

धार्मिक, जातीय और एथनिक पहचानें समुदायों को परिभाषित कर रही थीं और राजनीतिक एवं आर्थिक हित समूहों द्वारा इनका लगातार दोहन किया जा रहा था ताकि वे संसाधनों तक अपनी पहुंच, बाज़ार, लोगों और श्रम पर नियंत्रण स्थापित कर सकें और इसमें प्रातिनिधिक लोकतंत्र का ढांचा उनकी मदद करता कि वे वोट हासिल कर खुद को ताक़तवर परिस्थितियों में रखें जो उनके हितों को सुरक्षित करे।

इस तरह दक्षिण एशिया में अस्मिता और राजनीति का यह आपसी संवाद कोई नई बात नहीं है पर आज अंतर्राष्ट्रीय विमर्श इसे आकार दे रहा है। अंतर्राष्ट्रीय पूंजी का बढ़ता दबदबा दुनिया भर में राजनीतिक निर्णयों को प्रभावित कर इस क्षेत्र में प्रत्यक्ष बदलावों को दिखा रहा है। पूंजी का एकाधिकार चंद लोगों तक ही सीमित रहे इस आर्थिक हित की पूर्ति सुनिश्चित करने के लिए ज़रूरी है कि वंचित जनता बंटे और विभ्रमित रहे। फूट डालकर राज करने के लिए लोगों की अस्मिता को हथियार बनाकर और सांस्कृतिक वर्चस्व स्थापित कर सत्ता और शक्ति को नियंत्रित किया जाता है।

भूमंडलीकृत संचार साधनों ने दक्षिण एशियाई अस्मित की राजनीति के इस ताक़त के खेल में नए आयाम जोड़े हैं। अस्मिताओं का निर्माण उन तरीकों से हो रहा है जो पहले दक्षिण एशिया के लिए अनजानी थीं। आज दक्षिण एशिया में जाने पर यह स्पष्ट रूप से दिखता है कि विशेषकर महिलाओं और उनका ड्रेस कोड किस प्रकार पहचान की अंतर्राष्ट्रीय राजनीति का एक प्रत्यक्ष प्रमाण है। मुस्लिम ड्रेस कोड को एक उदाहरण के तौर पर लिया जा सकता हैः पहले बांग्लादेश में बंगाली मुसलमानों के लिए हिजाब पूरे तौर पर एक अनजाना परिधान था पर अब निम्न मध्यवर्गीय महिलाओं के लिए यह एक सामान्य परिधान है। ढाका में महिलाओं को हिजाब मेला में आमंत्रित किया जाता है जहां वे नए फैशन और तकनीक वाले हिजाबों के बारे में जानती हैं। वहाबी इस्लाम जिसकी दक्षिण एशिया में नगण्य

उपस्थिति थी अब भारी बाहरी निवेश के द्वारा मुख्यधारा की इस्लामिक चिंतन परंपरा के रूप में इस क्षेत्र में प्रोत्साहित किया जा रहा है, यह क्षेत्र जहां मुस्लिम समुदायों के बहुरूप तौर-तरीकों में प्रमुखता से सूफीवाद की झलक थी।

विविध हिंदुत्ववादी विचारधाराओं ने विश्वासों और परंपराओं वाले बहुलतावादी हिंदु धर्म को संकीर्ण और कट्टर विश्वासों वाले हिंदुत्व में सीमित कर दिया, इसने जातिगत भेदों को पुनर्स्थापित किया तथा हिंदुत्ववाद को राष्ट्रवाद का एक प्रोजेक्ट बना दिया।

ईसाई समुदायों ने उत्तर अमेरिकी प्रवृत्तियों के कारण ईसाई कट्टरपंथ को पुनः उभरते हुए देखा है जो समावेशी होने के बजाय बेहद संकीर्ण है। यूरोप में ये गुट प्रवासी समुदायों अधिकतर मुस्लिम पृष्ठभूमि से आए समुदायों के खिलाफ़ हैं।

श्रीलंका में बौद्ध मत नृजातीय (एथनिक) राष्ट्रवादी प्रोजेक्ट का केंद्रीय तत्व रहा।

ये प्रवृत्तियां लोगों को यह अधिकार नहीं देती कि वे अपने तरीके से अपनी आस्था के अनुरूप आचरण करें या उसे व्यक्त कर सकें। ये प्रवृत्तियां दूसरों को बहिष्कृत कर कुछ लोगों में अधिकार भाव का पोषण करती हैं। ये लोगों को बांटते हैं और राष्ट्र राज्यों को 'साफ' करने के धार्मिक या नृजातीय (एथनिक) मिथ का पोषक करते हैं। इन प्रवृत्तियों को आत्मिक अभिव्यक्ति के रूप में समझने के बजाय स्थानीय/राष्ट्रीय और अतर्राष्ट्रीय स्तर पर सत्ता समीकरणों की गोट बिठाने की क़वायद के रूप में समझने की जरूरत है। दक्षिण एशिया में बहुप्रचलित जटिल और अक्सरहां समन्वयवादी धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराएं और आस्था सत्ता के इन खेलों से निरपेक्ष हैंः या तो वे बेहद स्थानीय हैं और सीमित क्षेत्रों तक सिमटी हुई हैं या वे धुंधली पड़ गयी हैं और विभिन्न पहचानों की सीमारेखा का अतिक्रमण कर जाती हैं इसलिए वे 'फूट डालो और राज करो' के राजनीतिक प्रोजेक्ट के लिए उपयोगी नहीं हैं। वर्तमान आर्थिक व्यवस्था के कारण अपना सब गंवा चुके लोगों के लिए ''हम'' बनाम ''वे'' की ये लघुकृत द्विभाजित परिभाषाएं ही हैं जो इनकी ज़िंदगी को मायने देती हैं। यही द्विभाजित विचारधारा आम लोगों की सोच को आकार देने लगती है जिसके प्रभाव में आकर वे इस दमनकारी आर्थिक राजनीतिक व्यवस्था के विरुद्ध अपनी भावनाओं को दिशा देने के बजाय दूसरे समुदायों से लड़ते हैं।

डॉ. खुर्शीद अनवर और उनकी टीम ने दक्षिण एशिया की इन विरासतों को इकट्ठा किया; दक्षिण एशिया में साझी सांस्कृतिक विरासतों और इसकी संभावनाओं के साथ सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया के लिए सामाजिक विश्लेषण और प्रशिक्षण/सामाजिक विश्लेषण प्रशिक्षण के लंबे अनुभव और जन संघर्षों के संगत ने विश्लेषण और सामाजिक कर्म का दृष्टिकोण विकसित करने की दिशा में प्रवृत्त किया जो दक्षिण एशिया में पहचान आधारित यथार्थों को चुनौती दे सके। संस्कृति और पहचान आधारित सत्ता के खेल के विश्लेषणात्मक प्रशिक्षण जिनमें राजनीतिक अर्थशास्त्र का भी पुट हो।

2002 में गुजरात जनसंहार ऐसे सभी दक्षिण एशियाईयों के लिए एक आघात था जो एक समावेशी और बहुलतावादी समाज बनाने का सपना संजोए संघर्षरत थे। 2002 भारतीय एक्टिविस्ट्स की लामबंदी और सामाजिक विश्लेषण के नए दृष्टिकोण विकसित करने के मामले में प्रेरक साबित हुआ। EED (अब ब्रेड फॉर द वर्ल्ड - EED) इस मामले में खुशकिस्मत थी कि डॉ. खुर्शीद अनवर और उनकी आईएसडी टीम ने इसे यह प्रस्ताव दिया कि वह आईएसडी के सामाजिक बदलाव की उस प्रक्रिया का साझीदार बने जिसमें दक्षिण एशियाई संस्कृतियों के साझेपन की समझ पुख़्ता करने के साथ-साथ उसे मजबूत किया जाए ताकि राजनीतिक सत्ता के इस खेल के विरुद्ध प्रतिरोध को ताक़त दी जा सके।

इस दृष्टिकोण का केंद्रीय तत्व है 'साझी विरासत'। समाज की विघटनकारी ताकतों पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय आईएसडी ने दक्षिण एशिया के लोगों को ओढ़ाई गयी पहचानों के बावजूद जोड़ने वाले बिंदुओं की तलाश में जुटना तय किया। यह सिर्फ संयोग नहीं था कि गुजरात में ऐसे धार्मिक स्थल जो हिंदु और मुसलमान दोनों की श्रद्धा के केंद्र थे सबसे पहले आक्रमण का शिकार बने और नष्ट किए गए।

इस अंतर्दृष्टि के साथ शुरू हुआ दक्षिण एशिया में कार्यशालाओं का सिलसिला जिसने साबित किया कि इस क्षेत्र में रोज़ ब रोज़ के जीवन में साथ लाने वाले सांस्कृतिक परंपराओं का अकूत खज़ाना है जो कि पहचान आधारित विभेदों के पार जाता है, फिर चाहे वह लोक परंपरा हो या भाषा या कविता, थियेटर, नृत्य, त्यौहार, खेती के तरीके या भोजन की आदतें और ये तो एक छोटी सूची है। आईएसडी ने इन समन्वयकों का एक आश्चर्यजनक संकलन तैयार किया, ज्ञान का एक खज़ाना जिसे व्यवहार में लाना चाहिए, इसे आईएसडी ने अपनी पुस्तिकाओं और वेबसाइट पर सहेजा है। इसके अलावा आईएसडी की पहलकदमी से तीन प्रशिक्षण मैनुअल तैयार किये जिसका एक बड़े प्रशिक्षक समूह द्वारा इस्तेमाल किया जा रहा है जिसे पिछले 10 सालों में आईएसडी ने प्रशिक्षित और विकसित किया है।

डॉ. खुर्शीद अनवर ने पूरे दक्षिण एशिया से एक्टिविस्ट को प्रोत्साहित करना अपना व्यक्तिगत मिशन बना लिया था कि वे विघटनकारी पहचान की राजनीति पर सवाल उठा सकें, इसके मूल कारणों का विश्लेषण कर सकें और अपनी विरासत का जश्न मना सकें ताकि वे इन विभेदकों से आगे बढ़ सकें और दक्षिण एशिया की उस समावेशी संस्कृति को मज़बूत कर सकें जिसने इस पूरे इलाके को इतना सर्वग्राही बनाया।

वे पाकिस्तानी और बांग्लादेशी एक्टिविस्ट्स को एक साथ लाए और उनके बीच उस वर्जित मुद्दे की चुप्पी को तोड़ा, बांग्लादेश के मुक्ति संघर्ष के दौरान पाकिस्तानी सेना की भूमिका पर पाकिस्तानी समाज का रवैया और साथ ही बांग्लादेशी समाज में बड़े पैमाने पर पाकिस्तानियों के प्रति पूर्वाग्रह पर दोनों देशों के प्रतिभागियों का चिंतन-मनन। पूर्वोत्तर भारत में उन्होंने विभिन्न नृजातीय समूहों के विभिन्न समुदायों के बीच के हिंसक बंटवारे को इस इलाके के लोगों के बीच के मज़बूत और आपस में गुंथे समाज की विरासत की खोज कर चुनौती दी। यहां तक कि कुंभ मेला में भी आईएसडी ने आत्मिक अभिव्यक्ति के जश्न का स्पेस बना लिया जिसे आश्चर्यजनक रूप से सराहा गया। मैं हमेशा याद करती हूं जब आईएसडी की एक कार्यशाला में झारखंड के ईसाई और गैर-ईसाई आदिवासी जिनके बीच आपसी बोलचाल का रिश्ता भी नहीं था वे मांदर की पुकार पर बांहों में बांहें डाले नाच रहे थे। हम खुर्शीद के साथ उसके सपने में शामिल थे कि कई मांदरों की आवाज़ हमें ज़ोरदार तरीकों से जगह-जगह से आवाज़ दे रही हैं इंसानियत के इस एक और साझा जश्न में शामिल होने के लिए।

उसके इतनी जल्दी जुदा होने से अब यह हमारी ज़िम्मेदारी हो गयी है कि हम उसके बड़े क़दमों के निशान पर अपने छोटे कदम रखें और समावेशी बहुलतावाद को दक्षिण एशिया बल्कि उसके भी बाहर रेखांकित करें और उसका जश्न मनाएं। अपनी खुद की पहचान की एक संशलिष्ट समझ विकसित करें ताकि पहचान की राजनीति पूरे समाज को अपने चपेटे में ले लें इस खतरे से बचने का यह शायद सबसे प्रभावी शुरुआती बिंदु होगा। इस ज़रूरी काम को जारी रखें।

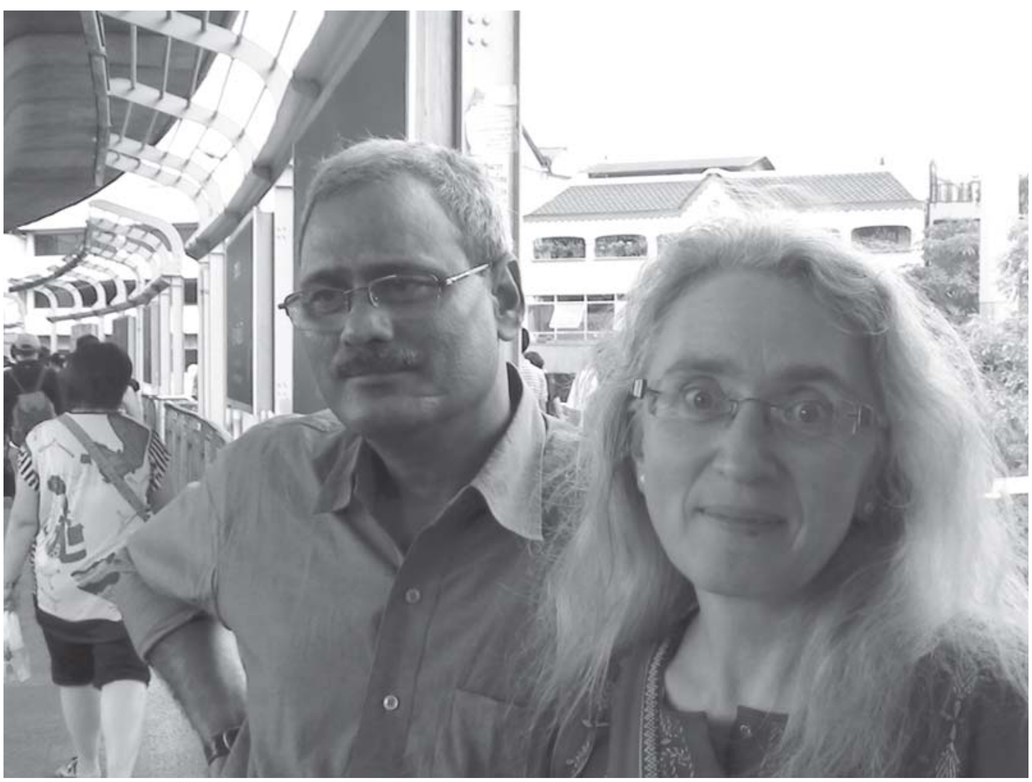

ख़ुर्शीद सर : बहुमुखी प्रतिभा के धनी और एक बेहतरीन इंसान

■ चंचल गढ़िया

ख़ुर्शीद जी से मेरी मुलाकात जनवरी 2003 में हुई जब उन्होंने शांति, सद्भाव व लोकतंत्र के लिए 'साझी विरासत' विषय पर काम करना शुरू ही किया था। तभी से मैं भी उनकी इस यात्रा में उनके साथ जुड़ गया और एक सहकर्मी के नाते उन्होंने मुझे और बाद में संस्था से जुड़ने वाले सभी सहकर्मियों को संस्था से जुड़े सभी प्रकार के कार्यों में भागीदार बनाया। मैं शुरुआत से ही उन्हें सर कह कर पुकारता और वे कहते रहते कि मुझे सर नहीं ख़ुर्शीद कह कर पुकारो। कभी प्यार से और यहां तक कि कभी डांटकर भी। उन्होंने संस्था के सभी सदस्यों को कुछ नया करने, जानकारी बढ़ाने और अपना हुनर निखारने के भरपूर मौके प्रदान किये और किसी को कभी यह अहसास नहीं होने दिया कि संस्थागत कार्यों और पद के अनुसार कोई बड़ा या छोटा है। कार्यालय व उसके बाहर लोकतांत्रिक और सद्भावपूर्ण माहौल तैयार किया और जब तक रहे उसे कायम रखा। वह कहते थे कि संस्था उनकी या किसी एक व्यक्ति विशेष की बपौती नहीं बल्कि संस्था के लिए कार्य करने वाले सभी लोगों की है। ख़ुर्शीद जी से मेरी मुलाकात जनवरी 2003 में हुई जब उन्होंने शांति, सद्भाव व लोकतंत्र के लिए 'साझी विरासत' विषय पर काम करना शुरू ही किया था। तभी से मैं भी उनकी इस यात्रा में उनके साथ जुड़ गया और एक सहकर्मी के नाते उन्होंने मुझे और बाद में संस्था से जुड़ने वाले सभी सहकर्मियों को संस्था से जुड़े सभी प्रकार के कार्यों में भागीदार बनाया। मैं शुरुआत से ही उन्हें सर कह कर पुकारता और वे कहते रहते कि मुझे सर नहीं ख़ुर्शीद कह कर पुकारो। कभी प्यार से और यहां तक कि कभी डांटकर भी। उन्होंने संस्था के सभी सदस्यों को कुछ नया करने, जानकारी बढ़ाने और अपना हुनर निखारने के भरपूर मौके प्रदान किये और किसी को कभी यह अहसास नहीं होने दिया कि संस्थागत कार्यों और पद के अनुसार कोई बड़ा या छोटा है। कार्यालय व उसके बाहर लोकतांत्रिक और सद्भावपूर्ण माहौल तैयार किया और जब तक रहे उसे कायम रखा। वह कहते थे कि संस्था उनकी या किसी एक व्यक्ति विशेष की बपौती नहीं बल्कि संस्था के लिए कार्य करने वाले सभी लोगों की है। एक बार मैंने गलती से उनसे पूछ लिया था कि अलां-फलां संस्था के मालिक अलां-फलां हैं तो उनका जवाब था कि कभी तुम मुझे भी इस संस्था का मालिक न कह देना। लेकिन संस्था पर जब कभी भी आर्थिक या किसी और प्रकार का संकट आया तो उन्होंने संस्था को हर मुसीबत से उबारा, दूसरों के लिए रत्ती भर भी चिंता करने की गुंजाइश नहीं छोड़ी।

आज के प्रतिस्पर्धात्मक दौर में जहां लोग खुद को ही आगे बढ़ाने और दिखाने में लगे रहते हैं, उन्होंने अपने सभी सहकर्मियों को संस्था के सभी प्रकार के कार्यों में बढ़-चढ़ कर आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया। वह हमेशा कहा करते थे कि कुछ नया करने व सीखने का

प्रयास करो। गलती की चिन्ता मत करो क्योंकि हर इन्सान से गलतियां होती हैं तभी कुछ सीखते हैं। एक कुशल प्रशिक्षक, लेखक, साहित्यकार, हिन्दी-उर्दू और अंग्रेजी पर अच्छी पकड़ होने के साथ-साथ वह एक बेहतरीन इंसान थे और उनसे मिलने वालों को भरपूर प्यार व इज्जत देते थे। हिन्दी के प्रमुख कवि, आलोचक, चिन्तक और कथाकार पुरुषोत्तम अग्रवाल जी ने उनके जन्मदिन के अवसर पर सभी सहकर्मियों से कहा कि उनकी नज़र में आज की तारीख में उर्दू, हिन्दी और अंग्रेजी साहित्य के सबसे अच्छे जानकार डॉ. नामवर सिंह जी के बाद खुर्शीद ही हैं, और आप लोग इसका लाभ उठाएं। उनकी बौद्धिक कुशलता और मृदुभाषिता ही थी कि जो उनसे एक बार मिलता उनका मुरीद बन जाता। हिन्दुस्तान ही नहीं दक्षिण एशिया और कुछ यूरोपीय देशों में भी उनके कई चाहने वाले मौजूद हैं जो उनके आकस्मिक निधन पर शोक-संतप्त हैं।

वह हर प्रकार के भेद-भाव के खिलाफ थे चाहे वह धार्मिक भेद-भाव हो, जेंडरगत भेद-भाव हो, जातिगत भेद-भाव, नस्ल व रंग आधारित भेद-भाव या फिर क्षेत्र आधारित भेद-भाव। हमेशा शोषितों, पीड़ितों व वंचितों के हक के लिए जी-जान से लड़ते रहे। प्रशिक्षण कार्यशालाओं के दौरान पूरी तैयारी के साथ हॉल में आते और तबियत ठीक न होने के बावजूद भी हमेशा समय पर पहुंचते। समूचे दक्षिण एशिया के सभी समाजों की आर्थिक, भौगोलिक, राजनीतिक और सामाजिक छोटी से छोटी जानकारी और सूचनाओं से वे हमेशा अपडेट रहते। कार्यशालाओं में प्रतिभागियों का सवाल हो, ट्रेनिंग टीम का सवाल हो, संस्था में कार्यकर्ताओं का सवाल हो या फिर किसी भी प्रकार की गतिविधि हो, वह हमेशा महिलाओं और पुरुषों के अनुपात और बराबर की भागीदारी का हर संभव प्रयास करते थे। उनमें ऐसे ही बहुत सारे गुण थे जिन्होंने उन्हें एक विश्वस्तरीय प्रशिक्षक और बहु प्रतिभाशाली बुद्धिजीवी के रूप में पहचान दिलाई।

उन्होंने सिर्फ साझी विरासत और सामाजिक विश्लेषण पर कार्यशालाओं और लेखन, विभिन्न सामाजिक सामाजिक सरोकार के मुद्दों पर लेखन में ही योगदान नहीं दिया बल्कि दक्षिण एशिया स्तर पर चल रहे 'आघात न पहुंचे-अमन की स्थानीय क्षमता परियोजना' कार्यक्रम में भी एक नेटवर्क सदस्य संस्था का कार्यकर्ता होने के नाते महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन सभी कार्यक्रमों, मुद्दों पर कार्यों के दौरान और शांति, सद्भाव और लोकतंत्र के लिए विभिन्न स्तरों पर होने वाले प्रयासों के दौरान उनकी कमी तो खलती रहेगी मगर यह भी सच्चाई है कि दक्षिण एशिया और उसके बाहर भी उनके द्वारा तैयार किए गए शांति कार्यकर्ता उनके सपने और सपनों का समाज स्थापित करने का हर संभव प्रयास करेंगे जो उन्हें भेंट स्वरूप दी जाने वाली सच्ची गुरु दक्षिणा होगी।

डॉ. ख़ुर्शीद अनवर को श्रद्धांजलि

■ डॉ. रिचर्ड देवदास

जब भी मैं ख़ुर्शीद के बारे में सोचता हूं, यादों का, दृश्यों का और सोच का एक सैलाब मुझे मथ जाता है। क्षमता वृद्धि सत्रों में कई रंगों के व्हाइट बोर्ड मार्कर हाथ में लिए, सामायिक मुद्दों का स्पष्ट विश्लेषण और दमदार अभिव्यक्ति, जब भी कहीं हिंसा हो चाहे गुजरात, बिहार, तमिलनाडु, मणिपुर, नागालैंड या किसी भी दूसरी जगह तो उसकी आंखों के आंसू और भावाद्रेक, विरोधी विचारों के समाधान का उसका कौशल, भावी लीडरशीप को प्रशिक्षित करने का उसका जज़्बा, अन्याय के खिलाफ़ होने वाले संघर्षों के साथ उसकी एकात्मकता, ख़ुर्शीद के द्वारा 'साझी विरासत' और 'अमन की स्थानीय क्षमता' (एलसीपी)- 'आघात न पहुंचे' (डीएनएच) पर तमिलनाडु के मदुरै और कन्याकुमारी, आंध्रप्रदेश के अदोनी और चित्तूर में कुछ साल पहले कार्यकर्ताओं के साथ हुई कार्यशालाएं जो आज भी मेरी यादों में दर्ज है। शायरी और साहित्य का मानो स्रोत था वह। जब वह आसपास होता तो ठहाकों और मस्ती का एक मजमा साथ होता था। वह हमेशा दोस्तों और अपने चाहने वालों से घिरा रहता। ख़ुर्शीद की शख़्सियत और उसकी उपस्थिति ऐसी ही थी- छा जाने वाली। ख़ुर्शीद से जुड़ी अपनी बहुत सी यादों में से कुछ मैं यहां रखना चाहूंगा-

1) ख़ुर्शीद एक सरापा इंसानियत- किसी की भी ज़रूरत के लिए कांधा हाज़िर करना ख़ुर्शीद का स्वभाव था। वह लोगों की समस्याएं सुनता, सुलझाता और उन्हें तराशता। वह एक मददगार और हमदर्द इंसान था। उसकी दोस्ती ईमानदार थी। वह लोगों की तकलीफ को आवाज़ देता था। उसके लिए आईएसडी के लोग सिर्फ स्टाफ नहीं थे बल्कि एक बड़े परिवार का हिस्सा थे। मैं एलसीपी-डीएनएच और साझी विरासत की विभिन्न कार्यशालाओं में उसके साथ सहायक प्रशिक्षक के रूप में रहा हूं अधिकतर इन कार्यशालाओं में महिला प्रतिभागियों की संख्या पुरुषों की तुलना में ज़्यादा होती थी। मैं दृढ़तापूर्वक यह कह सकता हूं कि वह दिल से एक जेंडर एक्टिविस्ट था। अपने समकक्ष महिलाओं के साथ बराबरी और शिष्ट, गंभीर तथा सम्मानजनक बर्ताव, समानता और दावेदारी में उनकी लड़ाई में उनका हमक़दम ख़ुर्शीद।

इसलिए उसके खिलाफ लगे आरोपों को सुनकर मैं स्तब्ध हो गया। ख़ुर्शीद जैसे इंसान की ईमानदारी पर ऐसा बदनुमा दाग, इतने जघन्य आरोप के पीछे कौन सी ताक़तें और लोग हैं, इन सबके पीछे असली मक़सद क्या है इसकी विस्तृत जाँच होनी चाहिए ताकि सच सामने आ सके।

2) ख़ुर्शीद एक सर्जक - ख़ुर्शीद एक ही साथ एक विचारक, एक सहज बुद्धिजीवी और एक एक्टिविस्ट था जिसे कार्यशालाओं में उसके फेसिलिटेशन के दौरान प्रत्यक्ष रूप से देखा जा सकता था।

उसके जोशीले सत्र जिसमें उसकी अनुभवों से मिली दानिशमंदी और विशेषज्ञता झलकते थे, प्रतिभागियों को नया नज़रिया और नयी क्षमताएं देते थे। ये सत्र उन्हें प्रेरित करते थे कि वे अपनी क्षमताओं को असली जामा पहनाने के लिए भरपूर संघर्ष करें। खुर्शीद एक सर्जक था। उसने प्रतिभागियों को न सिर्फ ज्ञान पिपासु बल्कि एक प्रशिक्षक के तौर पर भी गढ़ा। आईएसडी की अपनी टीम के लोगों को उसने सिर्फ अच्छे कर्मचारी की तरह नहीं बल्कि उनके अंदर रचनात्मक नेतृत्व की क्षमता विकसित की जो चुनौतियां झेलने और अन्याय से लड़ने में सक्षम हैं। खुर्शीद ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई URAVUGAL (रिश्ता) के निर्माण और उसे बढ़ाने में। यह तमिलनाडु में शांति बहाल करने के लिए एक मुद्दा आधारित नेटवर्क है जिसे खुर्शीद ने कार्यशालाओं और अपने व्यक्तिगत तथा व्यावसायिक संबंधों से मज़बूत बनाया।

3) खुर्शीद न्याय का योद्धा - खुर्शीद हमेशा दलितों, आदिवासियों, शोषितों और वंचितों के साथ खड़ा रहा। उसका दिल हाशिये के लोगों और शोषितों के लिए धड़कता था। जब इन असुरक्षित लोगों के अधिकारों का हनन होता उन पर जाति, धर्म, जेंडर या धन की सत्ता के बल पर अत्याचार किये जाते थे तो वह व्यथित हो जाता था। वह उन इलाकों में गया और हिंसा के शिकार लोगों से मिला, न्याय की माँग की और उनके लिए मिलने वाली मदद को दिशा दी। वह मीटिंग्स में बेधड़क बोलता था और अपनी लेखनी में बिना इस बात की परवाह किये अपराधियों की निंदा करता था कि वे कौन हैं या कितने ताक़तवर हैं। उसे हमेशा इस बात का भरोसा रहा कि अमन का रास्ता न्याय से होकर गुज़रता है।

मेरे लिए आज भी यह मानना मुश्किल है कि खुर्शीद अब हमारे बीच नहीं है। जो वह था उसके लिए उसे हमेशा याद किया जाएगा। एक सच्चा दोस्त और एक इंसान; कार्नरस्टोन और URAVUGAL ने न्याय, गरिमा और समानता के साथ अमन के रास्ते का अपना एक दोस्त, सलाहकार और हमराही खो दिया।

मेरे दोस्त, कॉमरेड और गुरु

■ तेज सिंह ठाकुर

18 दिसंबर, 2013 दोपहर करीब सवा दो बजे सुनन्दा दीक्षित के फोन से सदमा पहुँचाने वाली ख़बर मुझे मिली कि मेरे दोस्त, कॉमरेड और गुरु डॉ. ख़ुर्शीद अनवर नहीं रहे। सहसा मुझे यक़ीन नहीं हुआ क्योंकि एक दिन पहले ही मेरी उनसे और श्रुति से फोन पर बात हुई थी। वे जैसे गये वह कभी सोचा भी नहीं जा सकता था। मैं हमेशा उनकी सेहत के लिए फ़िक्रमन्द रहता था। समाज के वंचितों के लिये हमेशा संघर्ष करने वाले व्यक्ति को झूठे आरोपों का सामना करना पड़ा। ख़ुर्शीद ख़ुद एक योद्धा थे लेकिन वे झूठे आरोपों को बर्दाश्त नहीं कर सके। ये झूठे आरोप उन्होंने लगाये थे जो तर्क के द्वारा उनकी आवाज़ को ख़ामोश नहीं कर पाये थे न ही उनकी कलम को रोक पाये थे। मैं आपको सलाम करता हूँ कॉमरेड ख़ुर्शीद!

मेरा उनसे पहला परिचय जुलाई 1986 में हुआ, जब मैं जेएनयू में अध्ययन के लिये कुल्लू से दिल्ली पहुंचा। जेएनयू में मैं वरयाम सिंह जी के परिवार के अलावा जिन तीन व्यक्तियों से सबसे पहले मिला ख़ुर्शीद उनमें से एक थे। मैं, ख़ुर्शीद और एस. एन. मालाकार के नाम एक ख़त लेकर जेएनयू पहुँचा था। लेकिन एस. एन. मालाकार की जगह मेरी कॉमरेड सुधीर मालाकार से पहले मुलाक़ात हुई। उन्होंने ही नीलगिरी ढाबे पर मेरा परिचय कॉमरेड ख़ुर्शीद और एस. एन. मालाकार से कराया। मैं इन लोगों से मिलकर बहुत खुश था। बाद में इन्होंने मेरा परिचय बी. आर. दीपक और जगदीश कटोच से भी कराया। इस मुलाक़ात के बाद ख़ुर्शीद से जीवनभर का रिश्ता बन गया और वे मेरे गुरुजी बन गये। ख़ुर्शीद जेएनयू में ए.आई.एस.एफ. (आल इंडिया स्टूडेन्टस फेडरेशन) के नेता थे। जिस समय मैं जेएनयू पहुंचा, छात्र संघ का चुनाव नज़दीक था। ख़ुर्शीद ने मुझसे स्कूल ऑफ लैंग्वेज़ से चुनाव लड़ने के लिये कहा। वे हमारे पैनल इन्चार्ज थे और बहुत ही अनुशासित थे। उन्होंने हमें सिखाया कि चुनाव अभियान कैसे चलाया जाता है। वह हमसे रोज़ अभियान की रिपोर्ट भी लेते थे। वह अनुशासनप्रिय होने के साथ ही बहुत नरमदिल भी थे। उन दिनों वह हमारी रोज़मर्रा की ज़रूरतों का भी बहुत ख़याल करते थे।

उन दिनों का एक रोचक किस्सा सुनाता हूँ। मैं अपने कपड़ों पर हफ़्ते में एक दिन इस्तरी करता था। एक दिन उन्होंने मुझे बग़ैर इस्तरी किये कपड़ों में देखा तो फौरन कपड़े बदलने का हुक्म सुना दिया और मुझे कपड़े लेकर अपने कमरे पर बुलाया। वहाँ उन्होंने ख़ुद ही मेरे कपड़े इस्तरी किये।

मैं उनकी और मीनू की शादी में भी था और समर (उनका बेटा) के बड़े होने की भी बहुत सी यादें मेरे पास हैं। उन दिनों ख़ुर्शीद स्कूल ऑफ लैंग्वेज में पढ़ाते थे। और मीनू दिल्ली विश्वविद्यालय में पार्ट टाइम कक्षाएँ ले रही थीं। कभी-कभी मैं, बलबीर, अमिताभ मिश्रा और स्वर्गीय आदित्य चौहान, समर को मास कम्युनिकेशन्स के पास एक क्रेश में ले जाते थे। मुझे स्कूटर चलाना नहीं आता था इसलिये मेरी ज़िम्मेदारी होती थी बलबीर के स्कूटर पर पीछे बैठकर समर को पकड़ना।

जब भी जेएनयू में कोई गजटेड छुट्टी होती थी, हम मेस से भी छुट्टी ले

लेते थे। आमतौर पर हम डिनर के लिये ख़ुर्शीद के घर कटवारिया सराय पहुँच जाते। ख़ुर्शीद, अज़हर भाई और शैल झा के साथ मिलकर बहुत स्वादिष्ट मटन पकाते थे। आदित्य शाकाहारी थे और सब्ज़ियाँ पकाते थे। एक बार मैंने ज़ोर दिया कि मैं मटन पकाऊँगा। ख़ुर्शीद ने मुझे इसके लिये मना किया और कहा तुम्हें खाना पकाना नहीं आता। लेकिन फिर भी मैं आग्रह करता रहा और आख़िरकार मटन पकाया भी। जब वह परोसा गया तो सबने खाने से इन्कार कर दिया। उस दिन के बाद से जब भी मटन पकना होता तो ख़ुर्शीद कहते, 'तेज़ सिंह ठाकुर को रसोई में मत घुसने देना।'

ख़ुर्शीद जेएनयू में ए.आई.एस.एफ. के स्टडी सर्किल चलाते थे। ये स्टडी सर्किल या तो सतलज हॉस्टल में होते या कावेरी हॉस्टल में। एक बार जब वह 316 नम्बर कावेरी हॉस्टल में स्टडी सर्किल चला रहे थे, उन्होंने सोवियत संघ में हो रहे परिवर्तनों के बारे में एक सवाल संजय झा से पूछा। सवाल के जवाब में संजय की जगह जगदीश कटोच बोल पड़े। ख़ुर्शीद चिल्लाये 'जगदीश को जवाब देने दो। क्या मैंने तुमसे पूछा?' माहौल को हल्का करने के लिये मैंने कहा 'गुरुजी क्लास ले रहे हैं, कोई छात्र बीच में नहीं बोलेगा।' सब लोग हँस पड़े। उस घटना के बाद हममें से कुछ लोग जीवनभर उन्हें गुरुजी कहकर ही पुकारते रहे। अगर गलती से भी कभी मैं उन्हें 'सर' कहता तो डाँटते कि कम-से-कम मैं तो उन्हें सर न कहूँ। और कहते कि या तो मैं उन्हें नाम लेकर पुकारूँ या गुरु जी कह कर। अगर कोई उन्हें 'सर' या 'डॉक्टर' कहता तो बहुत चिढ़ते थे। उनके कई दोस्त उन्हें 'खुर' कहकर भी बुलाते थे।

गुरुजी ने जेएनयू छात्रसंघ चुनावों में हमेशा महत्वपूर्ण भूमिका निभाई लेकिन 1992 के चुनाव में उनकी भूमिका को मैं हमेशा याद रखूंगा। वह बहुत शानदार कॉमरेड थे। व्यक्तिगत रूप से उन्होंने मेरी बहुत मदद की। उन्होंने अपने शागिर्द की तरह मुझे सिखाया, मेरी गलतियाँ सुधारीं और मुझे दोस्त की तरह प्यार दिया साथ ही मेरे आलस और कमज़ोरियों को अनदेखा भी किया।

मैं अभी भी पछता रहा हूँ कि मैं 17 दिसंबर को मंडी से दिल्ली क्यों नहीं गया। अगर मैं वहाँ पहुँच गया होता तब शायद गुरु जी इतना कठोर कदम न उठाते और अपने दुश्मनों से जमकर मुक़ाबला कर रहे होते। मैं व्यक्तिगत रूप से और साथ ही हम सामूहिक रूप से यह कसम खाते हैं कि हम उनके लिये न्याय हासिल करने के लिये संघर्ष करते रहेंगे। साथ ही उन्होंने वंचितों के हक़ के लिये हर तरह के नस्लवाद के विरुद्ध और महिला अधिकारों के लिये जो संघर्ष छेड़ा था, उसे भी हम आगे बढ़ायेंगे। उन्होंने 2012 में निर्भया के लिये संघर्ष छेड़ा था और हमें भी प्रेरणा दी थी कि हम इन मुद्दों पर लगातार हस्तक्षेप करें।

लाल सलाम गुरु जी।

डॉ. ख़ुर्शीद जैसे मार्गदर्शक और लेखक को खोना एक बहुत बड़ी क्षति

■ **दलजीत घरती**
नेपाल

मेरी मुलाकात डॉ. खुर्शीद अनवर, श्रुति और कालीपादो सरकार से पहली बार सी.सी.डी.बी., होप फाउंडेशन ढाका, बांग्लादेश में हुई। 2011 में साझी विरासत पर आयोजित ट्रेनिंग में वे लोग फेसिलिटेटर थे और मैं प्रतिभागी के रूप में शामिल हुआ। यह मेरी पहली बाँग्लादेश यात्रा थी जो काफी लाभदायक रही क्योंकि इसी ट्रेनिंग ने मुझे खुद को पीस बिल्डिंग ऑफिसर होने का दावा करने के लिए प्रोत्साहित किया। तब तक मुझे स्थानीय स्तर जहाँ समुदाय अकसर तनाव/टकराव से जूझते हैं, शांति स्थापना के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। उसके बाद मुझे डॉ. खुर्शीद अनवर से मिलने, बात करने और सीखने के कई अवसर मिले। समूचे दक्षिण एशिया में मैंने उनको एक अच्छा मेंटर, नेतृत्व करने वाला और एक विद्वान के रूप में पाया। दक्षिण एशिया विभिन्न प्रकार के तनाव/टकराव का गढ़ रहा है। उन्होंने इन तनावों व टकरावों को रोकने और सांप्रदायिक सद्भाव कायम करने के लिए साझी विरासत विषय जो कि एक सांस्कृतिक औज़ार है, का ईज़ाद किया और अमन की स्थानीय क्षमता विषय का भी इस्तेमाल कर रहे थे। शांति, सद्भाव और लोकतंत्र के लिए उनके महत्वपूर्ण योगदान की सराहना की जानी चाहिए।

उनके निधन के बारे में मुझे कोई खास जानकारी नहीं है। हो सकता है इस पूरे घटनाक्रम में कई तत्व अहम भूमिका निभा रहे हों। एकाएक जब मैंने सुना कि डॉ. खुर्शीद अनवर हमारे बीच नहीं हैं तो मैं भीतर तक हिल गया। मैं किसी से बात करने या घटना के बारे में पूछने की हिम्मत भी नहीं जुटा पाया। आई.एस.डी. के सदस्यों के बारे में पूछना भी बहुत मुश्किल था। मुझे अब भी ऐसा लगता है कि वह जीवित हैं। इस दुःस्वपन पर यक़ीन करना बहुत मुश्किल है। मैंने कभी नहीं सोचा था कि वह इतनी जल्दी हमें छोड़कर चले जाएंगे। मैं हमेशा उन्हें मिस करता हूं और प्रार्थना करता हूँ कि उनकी आत्मा को शांति मिले।

आई.एस.डी. और पूरे दक्षिण एशिया के लिए डॉ. खुर्शीद जैसे मार्गदर्शक और लेखक को खो देना एक बहुत बड़ी क्षति है। उन्होंने हमें रोज़मर्रा की यात्रा में हाथ पकड .कर कदम-कदम पर चलना सिखाया। उन्होंने अन्याय के खिलाफ आवाज़ उठाई और शोषित, वंचित और अति गरीब समुदायों की पहचान व अधिकारों के लिए लड़ाई लड़ी। वह लोगों से प्रेम करते थे, उनकी बातें सुनते थे, सहकर्मी के रूप में लोगों के साथ काम किया और अन्ततः अपनी ज़िंदगी कुर्बान कर दी। समाज में हो रहे अच्छे बदलाव से शायद शैतान खुश नहीं था। डॉ. खुर्शीद के साथ हुए अन्याय के खिलाफ मेरा समर्थन हमेशा रहेगा। दोषियों को सज़ा ज़रूर मिलनी चाहिए।

मेरा अन्ना... एक अमर लेजेंड

■ पी. बाला मुरुगन

मैंने अपने मित्र राजन और अजीत से शांति प्रेमी के बारे में बहुत सुना था। वे उन्हें उनकी सादगी, समर्पण और शांति-सद्भाव के प्रति कटिबद्धता के लिए याद करते थे। मैं उनसे मिलना चाहता था और अपनी यह इच्छा अपने मित्रों से ज़ाहिर की। मैं उनसे मिलने के अवसर का इंतज़ार कर रहा था। अजीत और राजन ने भरोसा दिलाया कि वे मुझे उनसे ज़रूर मिलवाएंगे। अजीत जो कि आई.एस.डी. के साथ मिलकर काम करते थे, ने अपने वादे के मुताबिक आखिरकार एक दिन उनसे मेरी मुलाकात करवा दी लेकिन उन्हें जानकारी नहीं थी कि हम एक-दूसरे से मिलने वाले हैं। हां, मेरी मुलाकात उनसे अजीत के अंतिम संस्कार के वक्त हुई। जब मैं उनसे मिला तो वह रो रहे थे। अजीत के आकस्मिक निधन पर हम सभी हैरान थे। मैंने देखा कि ख़ुर्शीद आंसुओं से भीगे हुए थे क्योंकि अजीत उनके लिए बहुत ख़ास थे। दुःख और सदमे में होने के कारण हम एक-दूसरे से बात नहीं कर पाए।

कुछ दिन बाद साझी विरासत पर प्रशिक्षण के दौरान तूतीकोरीन में मेरी मुलाकात श्रुति से हुई। मैंने उनसे ख़ुर्शीद से मिलने की इच्छा जताई और उन्होंने वादा किया कि वह ज़रूर कोशिश करेंगी। श्रुति ने ख़ुर्शीद से बात की और बांग्लादेश में आयोजित सामाजिक विश्लेषण विषय पर होने वाली कार्यशाला के लिए मुझे आमंत्रित किया। मैं इस कार्यशाला के दौरान ख़ुर्शीद से मिलने के लिए बहुत उत्सुक था। यह कार्यशाला अजीत को समर्पित थी और उद्घाटन सत्र के दौरान अजीत को श्रद्धांजलि भी अर्पित की गयी। जब उन्होंने कार्यशाला चलानी शुरू की तो मुझे अहसास हुआ कि मेरे दोस्तों ने मुझे उनके बारे में बहुत कम बताया था। जितना मैंने उनके बारे में सुना था वह उससे कहीं ज़्यादा प्रशंसा के हक़दार थे। वह अपने आप में ज्ञान का भंडार थे जिससे मैं उनका कायल हो गया। मैं यह सोच कर उनसे मिलने गया था कि उनकी नज़र में अपनी एक जगह बना पाऊं लेकिन मुझे अपनी गलती का अहसास तब हुआ जब मेरी उनसे बातचीत हुई। उन्होंने हम सब पर खूब प्यार और स्नेह उड़ेला और हम जैसे थे उसी रूप में स्वीकार किया। उन्होंने हम सबको हमेशा प्यार और सम्मान दिया। हालांकि यह सिर्फ तीन दिन का साथ था जो कि बहुत कम समय होता है लेकिन उनके साथ बिताया हुआ यह अनुभव बहुत ही सुखद और रोचक था। बाद में मुझे उनके साथ समय बिताने के कई अवसर मिले और हर पल का भरपूर आनंद उठाया।

वह एक ही ढर्रे पर चलने वाले ट्रेनर नहीं थे बल्कि पूरी कार्यशाला ऐसे डिज़ाइन करते थे कि प्रतिभागी बिना किसी दबाव के मस्ती के साथ सीखते थे। वह दूसरों को गाना, नृत्य करना और हंसी-मज़ाक से संबंधित उनकी प्रतिभा को निखारने और प्रदर्शित करने के लिए प्रेरित करते रहते थे। वह स्वयं भी हंसी-मज़ाक पसंद इंसान थे और खुद की व्यंग्यात्मक बातों का मज़ा लेते थे। कार्यशालाओं के दौरान हमने अच्छा समय व्यतीत किया साथ ही गाना, नाचना, एक-दूसरे के साथ हँसी-मज़ाक और एक दूसरे की टाँग खींचने का भी भरपूर आनंद उठाया। उन्होंने हममें एकता का भाव जगाया। यह आई.एस.डी. परिवार है और एक परिवार का मुखिया होने के नाते वह सुनिश्चित करते थे कि सभी सदस्यों

की उम्मीदें पूरी हों। वह हमेशा प्रत्येक व्यक्ति का ख्याल रखते थे। जब हम शॉपिंग के लिए जाने की योजना बना रहे थे तब मैंने उनसे पूछा ''अन्ना...आप शॉपिंग की व्यवस्था कर रहे हैं, हमें रुपये कौन देगा? उन्होंने बिना सोचे अपना बटुआ दे दिया। मैंने कहा-धन्यवाद अन्ना, मैंने हंसी-मज़ाक के तौर पर कहा। लेकिन उन्होंने श्रुति से कहा कि प्रत्येक व्यक्ति को कम से कम सौ रुपये दें। वह अपने दृष्टिकोण में हमेशा उदार थे। अगर कोई उनसे बहस में उलझता तो वह उन्हें समझाते और उनकी भावनाओं का सम्मान करते। कई बार हम सहानुभूति की बात करते लेकिन उसका पालन करने में विफल हो जाते। वह हमेशा सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण रखते और उस पर अमल भी करते थे।

हमारे रिश्ते तब और भी मज़बूत हुए जब उन्होंने मुझे 'सच' पत्रिका के संपादकीय बोर्ड और साझी विरासत की ट्रेनिंग टीम में शामिल किया। उन्होंने मुझे आई.एस.डी. टीम का हिस्सा बनने के लिए प्रोत्साहित किया। दूसरों में संभावित प्रतिभा को पहचानने और उस प्रतिभा का सटीक इस्तेमाल करने का हुनर उनमें बखूबी था।

पिछले साल नेपाल में जब हम दोनों उनके कमरे में अकेले थे तो वह अपने स्वास्थ्य के बारे में बता रहे थे और बोले कि ''बाला, मुझे मालूम नहीं कि मैं कब तक जीउंगा। मैंने उनको रोका और कहा कि ''अन्ना कृपया इस प्रकार की बातें न करें, हमें आपसे अभी और बहुत कुछ सीखना है, इसलिए आपको लंबे समय तक जीना है। उन्होंने कहा, मैं यह सब करूंगा, अगर मैं मर भी गया तो भी मैं खुश हूं कि दुनिया भर में ऐसे लोग हैं जो हमारे द्वारा शुरू किये गए काम को जारी रख सकते हैं। उनके साथ जो भी होगा वह खुश होंगे, इन शब्दों के साथ उन्होंने अपनी बात समाप्त की।

शाम को हमने प्रशिक्षण संबंधी बातों से अलग बहुत सी बातें कीं और मुझे यह समझ में आया कि वे महिलाओं का बहुत सम्मान करते थे। वे सभी के साथ बराबरी का व्यवहार करते थे। जब भी संभव हो पाता, मैं उनसे मिलना चाहता। सितंबर 2013 में दिल्ली यात्रा के दौरान आई.एस.डी. कार्यालय गया और उनके साथ अच्छा समय बिताया। जब मैंने अपनी दिल्ली यात्रा के बारे में उनको सूचना दी तो उनका जवाब था ''थाम्बी तुम्हारा इंतज़ार कर रहा हूँ''। मैंने उनके साथ फोटो खिंचवाया और वेबसाइट पर अपलोड किया। फेसबुक पर मैंने वही पहली और आखिरी फोटो डाली। वह एक गुरु, मार्गदर्शक, दार्शनिक, कवि, पत्रकार, भाई, संस्था प्रमुख, लेखक, प्रशिक्षक आदि बहुमुखी प्रतिभा के इंसान थे और अपनी सभी भूमिकाओं में उत्कृष्ट प्रदर्शन करते थे। उन्होंने हमसे प्यार और स्नेह के सिवा कभी कुछ नहीं चाहा। जब मुझे आई.एस.डी. से उनके आकस्मिक निधन के बारे में मेल प्राप्त हुई तो मैंने विश्वास नहीं किया यह सोचकर कि यह मेल झूठी या नकली है। जब मैंने श्रुति को फोन किया तो उन्होंने इस बात की पुष्टि की मुझे गहरा मानसिक आघात लगा, खुद को लाचार सा महसूस किया।

मेरा मानना है कि केवल उनकी शारीरिक अनुपस्थिति का यह मतलब नहीं है कि वह अब हमारे बीच नहीं हैं। वह हमेशा हमारे साथ हैं। उन्होंने मुझ जैसे शिष्यों में जो बीज बोए हैं, हम उनके सपनों को हक़ीकत में बदलने का कठिन प्रयास करेंगे।

ख़ुर्शीद
मेरे प्यारे दोस्त

■ **बारबरा म्यूलर**
जर्मनी

मेरे पास तुम्हारी एक तस्वीर है, पिछले साल की खिंची हुई। हमारी आशा कार्यशाला (एडवांस्ड सामाजिक ऐतिहासिक विश्लेषण)। हम एक-दूसरे से विदा नहीं ले पाए थे। तुम मुझे इतनी सुबह जगाना नहीं चाहते थे क्योंकि तुम्हारी दिल्ली की उड़ान सुबह थी। मैं उदास हो गयी थी, पर मैं जानती थी कि साथ काम करने का यह सिलसिला आगे भी जारी रहेगा बावजूद इसके कि हम दोनों के बीच आधी दुनिया का फासला है। इसलिए मैं बहुत ज़्यादा उदास नहीं हुई।

अब साथ काम करने का हमारा सिलसिला आगे जारी नहीं रहेगा। अब तुम नहीं हो और मैं तुमसे गले लगकर तुमको अलविदा नहीं कह सकती। मैं बुद्ध के उन शब्दों को नहीं समझ पाई थी जो मैंने अभी कुछ दिनों पहले ही पढ़े-

''मृत्यु निश्चित है
मृत्यु अनेपक्षित है
जीवन अनिश्चित है
जीवन ख़तरनाक है
मृत्यु निश्चित है।
इसलिए, मैं किसी भी क्षण मर सकता/ती हूं''

मुझे इसका आभास भी नहीं था कि मृत्यु तुम्हारे कितनी करीब है। मैं फिर उस तस्वीर को देखती हूं और चित्र में अपने तरफ का खालीपन महसूस करती हूं। तुम नहीं हो। तुम्हारी मुस्कुराहट, तुम्हारी आंखों की वो नटखट चमक, तुम्हारा आलिंगन- एक साथ नज़दीकी भी और दूरी भी। तुम्हारी उपस्थिति।

यह जगह, तुम्हारी जगह फिर नहीं भरी जाएगी। तुमने जिस तरह जटिलताओं को समझा वैसा और कौन समझ पाएगा? वो सारे किस्से और अनुभव कहां हैं जिन्हें तुमने पूरी ज़िंदगी लगाकर इकट्ठा किया था। लगभग हर समस्या और हर सवाल के लिए तुम्हारे पास एक कहानी थी।

और अक्सरहाँ ये कहानियां तक़लीफों की थी। तुम दुःखों से मुंह नहीं मोड़ते थे। नहीं, तुम तक़लीफों और दर्द को वैसे ही स्वीकारते थे जैसे तुम लोगों से बात करते थे। तुम सारी परेशानियों के साथ लोगों का स्वागत करते थे और उन्हें हौसला देते थे। तुम लोगों को उन परेशानियों का सामना करने का हौसला देते थे जिनसे वे गुज़रे थे। तुमने उन्हें दिखाया कि कैसे वे अपनी ज़िंदगी साझा करें और ऐसा करने में वे आगे बढ़ सकें। मैं एक सेमिनार के दौरान का एक पल याद कर सकती हूं जब एक महिला ने अपने साथ हुए अन्यायों के बारे में बताया। तुमने मेरा हाथ छुआ और फुसफुसाएः 'दुर्व्यवहार का एक और अनुभव।'

कुछ पलों में मैंने महसूस किया कि असुरक्षा की ये सारी

कहानियां तुम्हें कितना ज़ख्म देती हैं, तुम्हारे अंदर कितना दर्द है। पर तुम्हारी हिम्मत और जीवन के लिए तुम्हारी ललक पर मेरा भरोसा था, सभी के लिए गरिमापूर्ण जीवन का तुम्हारा आवेग, न्याय के लिए तुम्हारा आवेग ही तुम्हारा कवच होगा। तुम्हारा हास्यबोध तुम्हें - मुझे यकीन था कि तुम्हारी ज़िंदगी की ताक़त-संगीत, लोगों का साथ, गाना, तुम्हें अगाध गर्त से भी सुरक्षित बाहर निकाल लाएंगे।

कौन अब खुले ज़ख्मों पर अपनी उंगलियां रखेगा? कौन सख़्ती से तथ्यों की तह दर तह खोलता रहेगा जब तक सारी बातें सामने ना आ जाएं। किसका चाकू की धार की तरह तीखा दिमाग और वो भी बिना किसी अटकाव के हमारे साथ होगा ? मैं केवल कुछ ही पुरुषों से मिली हूं जो औरतों के द्वारा झेली जा रही गैर-बराबरी पर इतना नाराज़ और इतना क्रोधित हों जितना तुम होते हो। ऐसा लगता था कि वह गैर-बराबरी मानो तुम ही झेल रहे हो। जैसे तुम एक खुला ज़ख्म हो। तुम कोई भी छूट नहीं देते थे। तुमने मेरी जागरूकता का स्तर बढ़ाया। तुम्हारा शुक्रिया।

मेरे लिए यही बचा है तुमको शुक्रिया कहना। शुक्रिया उस थोड़े से वक्त और उन चंद अवसरों के लिए जिनमें हमने अपने ख़्याल साझा किए, अपनी सोच और सपनों को सीखने के मौकों में तब्दील किया। तुम्हारा शुक्रिया कि तुमने मुझे इस रचनात्मक सहकार में शामिल किया, तुम्हारे अनुभवों को साझा करने के लिए। हमारी साझी कृति-'आशा' (ASHA-Advanced Socio Historical Analysis) तुम्हारी विरासत है।

जब तुम मनुष्यता को समृद्ध करने दुबारा आओगे, तो मुझे बताना। तब तक तुम्हारा सितारा आकाश में ना चमके मेरे दिल में चमकेगा।

मेरा बोड़्दा

■ **मार्गरेट स्निग्धा मंडल**
बांग्लादेश

मैं अपने बोड़दा डॉ. ख़ुर्शीद अनवर के बारे में आपसे कुछ साझा करना चाहती हूँ। मैं उनकी ऊँची बौद्धिक प्रतिभा के बारे में चर्चा करने की जगह यह बताना चाहती हूँ कि वह किस तरह के इंसान थे। पहली बार मैं उनसे नेपाल में एल.सी.पी. (लोकल कैपिसिटीज़ फॉर पीस) कार्यशाला के दौरान मिली थी। उस कार्यशाला के बाद अक़सर ख़ुर्शीद भाई से मुलाकात होने लगी जब वे ढाका के होप सेंटर एल.सी.पी. या साझी विरासत पर कार्यशाला संचालित करने के लिए आते।

वे हमारे राष्ट्रीय कवि नज़रुल इस्लाम, लालन फ़कीर और बंगाली संस्कृति को बहुत पसंद करते थे। पिछले कुछ सालों में वे बांग्लादेश में अपनी कार्यशालाएं इस प्रकार से आयोजित करते थे कि उसी समय हमारा विजय दिवस भी पड़े ताकि वे हमारे साथ उसे मना सकें। वे राष्ट्रीय सीमाओं से परे थे और वसुधैव कुटुंबकम् को मानने वाले इंसान थे। वे हमेशा मुझसे कहते 'मुझे ख़ुर्शीद भाई मत कहो, मुझे बोड़दा कहो।' 'बोड़दा' बांग्ला शब्द है जिसका मतलब होता है, बड़ा भाई। वे मेरे बेटे शतद्रु से भी कहते कि 'मुझे अंकल मत कहो, मामा कहो।' मैं बता नहीं सकती कि वे मुझे और मेरे बेटे से कितना स्नेह करते थे। जो कोई उनसे जुड़ा वह महसूस कर सकता है कि उनके दिल में 'सबके लिए' कितना प्यार था।

जब हम होप फाउंडेशन में थे हम एल.सी.पी. और साझी विरासत की कार्यशालाओं का इंतज़ार करते थे ताकि हमें ख़ुर्शीद भाई से मिलने का मौका मिल सके। ख़ुर्शीद भाई अपने प्यार के प्रतीक स्वरूप हमारे लिए तोहफे भी लाते थे। उनके तोहफे मेरे पास महफ़ूज़ हैं। जब भी मैं उनकी दी हुई कोई पोशाक पहनती हूं उन्हें याद करती हूँ।

मुझे जब उनके अचानक चले जाने की ख़बर मिली मैं रोई नहीं क्योंकि मैं इस पर यक़ीन ही नहीं कर पाई। लेकिन अब जब मैं उनके बारे में लिख रही हूँ मैं अपने आँसू नहीं रोक पा रही। 'बोड़दा! मेरे बड़े भाई! क्या मुझे आप इस दुनिया से सुन सकते हैं??? मैं आपसे एक वाक्य कहना चाहती हूँ जो मैं आपके रहते हुए नहीं कह पाई' मैं आपसे प्यार करती हूँ'। मैं होप फाउंडेशन की ओर से; सभी एल.सी.पी. पार्टनर्स की ओर से और साझी विरासत के सभी प्रतिभागियों की ओर से कहती हूँ -'हम सब आपसे बेहद प्यार करते हैं।'

आप से तुम फिर तू का उनवान हो गए...

■ **मोअज़्ज़म**
पाकिस्तान

खुर्शीद
आप से तुम हुए फिर तू का उनवान हो गए...
यह दो देशों के दो लोगों की कहानी है।

शांति और दोस्ती की यह यात्रा सन् 2004 में श्रीलंका से आरंभ हुई। पीसा (पीस इन साउथ एशिया) में शांति की तलाश में दक्षिण एशियाई देशों के लोग एकत्रित हुए थे।

हैलो पाकिस्तानियो... आओ हमारे साथ शामिल हो जाओ। खुशमिजाज़ और मुस्कुराते हुए चेहरे के साथ एक व्यक्ति ने हमें आमंत्रित किया। वह खुर्शीद थे। हमने खुर्शीद और अन्य दक्षिण एशियाई मित्रों के साथ ''अमन की स्थानीय क्षमता'' विषय पर काम किया। कोलंबो में समुद्र किनारे की रेत पर चांद की रोशनी तले पाकिस्तान, श्रीलंका, बांग्लादेश, भारत और नेपाल से आए दोस्ताना स्वभाव वाले लोगों का एक अद्‌भुत समूह मौजूद था। साथ-साथ होने के एक अनोखे अहसास के साथ हम लोगों ने एक-दूसरे के साथ अपने ग़म और खुशियाँ बाँटीं। समन्दर की लहरों के संगीत के बीच हमने गीत गाए, कविताएँ पढ़ीं और चुटकुले सुनाए। वह रात बहुत ही ख़ास थी जिसने हम सभी को जीवन भर के लिए अटूट दोस्ती की डोर में बाँध दिया।

उस दिन और रात के कुछ ख़ूबसूरत पलों में ही खुर्शीद और मैं आप से तू पर आ गए। हम एक दूसरे को अबे, ओ पाकिस्तानी... अबे ओ हिन्दुस्तानी पुकारने लगे और भिन्न-भिन्न मौकों पर कई अन्य नामों से भी संबोधित करने लगे।

हमने एक-दूसरे के साथ बातें कीं, हँसे, लड़े, नाराज़ हुए और एक-दूसरे को मिस भी किया। हममें बहुत सारी समानताएं थीं मसलन मेंहदी हसन, मुकेश, लता, आबिदा परवीन, ग़ालिब, फ़ैज़, टैगोर, कृष्णचंदर, मुंशी प्रेमचंद, मंटो और जोश और भी कई सारे। भारत-पाकिस्तान के बीच होने वाले क्रिकेट मैच पर हमारी लड़ाइयाँ होती थीं। हालाँकि हम दोनों देशों के क्रिकेटरों की तारीफ भी करते थे। जब मैच के हार-जीत की बात आती तो वह पक्का हिंदुस्तानी देशभक्त बन जाता और कहता रूद्ध (अबे तू कितना भी ज़ोर लगा ले जीतना तो इंडिया ने ही है।)

अपने राजनीतिक पृष्ठभूमि और विचारधारा के चलते उनको पाकिस्तान यात्रा की अनुमति नहीं मिली। हम केवल बैठकों और कार्यशालाओं के दौरान ही मिल पाए। हम जब भी मिले, कभी ऐसा नहीं लगा कि लंबे समय बाद मिल रहे हैं। ऐसा लगता था जैसे कल ही मिले हों। वह जीवन और जोश से भरे हुए इंसान थे। विविध गुणों और विशेषताओं युक्त एक व्यक्ति। एक प्रशिक्षक, दार्शनिक, हिंदी-अंग्रेज़ी, उर्दू और संस्कृत का एक विद्वान और इन सबसे भी बढ़कर एक दोस्त। तुम्हारी बहुत याद आती है यार, ऐसे कैसे चला गया तू...

अम्बर कब शोक मनाता है एक आवारा मसीहा ख़ुर्शीद

■ **रिंकू चटर्जी**

कल तक पीठ पीछे अपशब्द कहने वाले कुछ मौसमपरस्त लोग जो तुम्हारी उगती रौशनी से जलते थे, आज सहसा तुम्हारे अस्त होने के पश्चात् तुम्हारी पूजा करने लगे हैं। मैं चुपचाप कोने में खड़ी, बदलते मौसम का रुख और गिरगिट को रंग बदलते देख हैरान हूं।

कुछ रिश्ते नाम के मोहताज नहीं होते। बड़े ही अनछुए, कुँवारे, पवित्र से ये रिश्ते शब्द सीमा को नहीं मानते। केवल भावनाओं और संवेदना के आचमन की जगह है रिश्तों की इस पावन गंगा में।

अपने पैंतीस वर्षीय लेखन के कारवाँ में न जाने कितने ही पथिक जुड़े। कभी कल्पना के आकार में तो कभी परोक्ष रूप में। लेकिन जीवन दान सभी को मिला। इस लंबी यात्रा के कुछ पथिक-पात्र जुड़े रहे, कुछ ज़िंदगी की भीड़ में गुम हो गए, कुछ आवारा बादलों की तरह न जाने किन दिशाओं में उड़ चले, कुछ लहरों की तरह क्षितिज की चाह में टूटे, बिखरे या भटक गए। लेकिन तुम महाप्रयाण को चल दिये। एक अनहद यात्रा।

अतीत, मेरे लिए पुराने कपड़ों से भरे संदूक की तरह है। कभी-कभी सहेज के रखी गयी यादों के संदूक को एकांत में खोल लेती हूं। तह किये गये कपड़ों की हर परत में कोई न कोई घटना या किस्सा छुपा हुआ है। परत-दर-परत तहें खुलती हैं और बासी इत्र और नेपथालिन की खूशबू न जाने कितने ही गुज़रे लम्हों की दास्तान को बेहयाई से निर्वस्त्र करती चली जाती है। लेकिन ये भी सच है कि साथ में न जाने कितने किस्से खुशनुमा हवा के झोंकों सी शरीर और आत्मा को चूमती चली जाती है। तुमसे मिलकर ऐसा लगा था बंधु, मानो किसी पुराने ग्रंथागार में पहुंच गयी हूँ और सहसा हाथों में कोई मनचाही किताब लग गयी हो, जिसकी तलाश सदियों से थी मुझे।

पीले पन्नों के धूमिल शब्दों की तरह कितनी पुरानी यादें, खट्टे-मीठे बेर जैसी, मन की जिह्वा को चटखारें देने लगी।

बड़ा गुमान और गुरुर था मुझे अपने बरगद होने का। वो बरगद, जिसने अपनी पनाह में न जाने कितने अपने, कितने अजनबी पथिकों को स्नेह और ममता की छांव दी थी। तुम भी उस रोज़ किसी घायल, क्लांत पक्षी की तरह मेरी शाखों पे आ गिरे थे। उस दिन तुम्हारा मन व्यथित था, पीड़ा से छटपटा रहा था। तुम्हारा विश्वास घायल हुआ था। तुमने जिन्हें अपना समझा वे सब 'ब्रूटस' बने हाथ में खंजर लिये खड़े थे। मैंने तुम्हारे घायल पंखों को सहलाते हुए समझाया-'रोना किस बात से है? निज स्वार्थ के लिए जिन्होंने तुमसे रिश्ता जोड़ तुम्हारे विश्वास पे वार किया, उनके लिए क्यों मातम करते हो? दूसरों के लिए तमाम उम्र जिये, थोड़ी ज़िंदगी अपने नाम भी लिख दो! तुम्हारे पंखों को हौसला मिला, उड़ने का परवाज़ मिला उस आकाश में जिसका एक हिस्सा तुम्हारे नाम भी था। लेकिन, वक्त सही नहीं था उड़ान भरने के लिए। या तो

तुममें धैर्य की कमी थी या ज़रूरत से ज़्यादा आत्मविश्वास। मैं विवश थी, तुम्हें रोक न पाई, तुम ज़िद पे अड़ गये कि 'उड़ सकता हूं'। उड़ने की चाहत में ऐसे गिरे कि फिर उठ नहीं पाए। मैं बरगद की तरह मौन खड़ी रही।

आज घर की छत पे खड़ी, तारों से भरे आकाश को देख रही हूं। आकाश के भीड़ भरे राजमार्ग पर सहसा एक चमकता मुस्कुराता सितारा नज़र आया। उस मुस्कुराहट को कैसे भूल सकती हूं? ये ताज़ा सितारा तुम ही हो ये भी जानती हूं। क्योंकि खुर्शीद अनवर मर नहीं सकता। रौशनी देना ही उसकी फितरत है, कहीं भी, किसी भी रूप में। मासूम सी मुस्कुराहट के साथ वो सितारा मेरी छत पर उतरा और कानों में हौले से कुछ कह कर छोटे-छोटे बादलों की गठरिया में छुप गया-''ऐ बंगालन! ध्यान से देखो मुझे। मैं ज़िंदा हूं दोस्त, और ज़िंदा लोगों के लिए आंसू नहीं बहाया करते। हाँ मैं ज़िंदा था और ज़िंदा रहूंगा हमेशा-तुम्हारा दोस्त खुर्शीद अनवर-

A Paradox Personified (विरोधाभासों का जीता जागता प्रतीक)

और वो आवारा मसीहा अपनी प्रिय पंक्तियां गुनगुना उठा जो हमेशा गुनगुनाया करता था-काज़ी नज़रूल इस्लाम की कविता-

बोलो बीर, चीर उन्नत शीर,
आमी नृशंस, आमी धृष्ट-
आमी उन्माद, आमी उन्माद, आमी उन्माद।

. . . .

आपका यूं जाना

■ **गौतम गोप**

हमें अचंभित कर गया
हृदय द्रवित कर गया,
आपका यूँ जाना।

पारदर्शिता थी आपकी सभ्य छवि
इतिहासकार, प्रशिक्षक और आप थे कवि।
हमें उद्वेलित कर गया
हृदय द्रवित कर गया
आपका यूँ जाना।

सबने मानी आपकी कौशलता-प्रखरता
निश्छल आलिंगन और सहृदयता,

सब कुछ तिरोहित कर गया
हृदय द्रवित कर गया,
आपका यूँ जाना

स्मृति-पटल में जीवित है, आप गुरु तुल्य
मार्गदर्शन करता रहेगा आपका जीवन मूल्य
किस पर आश्रित कर गया?
हृदय द्रवित कर गया,
आपका यूँ जाना

एक सिक्के के दो पहलू

■ रेणु ठाकुर

बीतते समय के साथ सब कुछ बदल जाता है। हम, हमारे ख्याल और जीने का तौर भी। हमारी ज़िंदगी के तजुर्बे ही हमें सिखाते हैं। पर जो आसानी से नहीं बदलता वह है हमारे आंतरिक मूल्य। हम अंदर से क्या हैं?

मैं ख़ुर्शीद को 1982 से जानती हूं जब मैंने एक छोटे शहर से नई दुनिया में प्रवेश किया (उस समय मेरे लिए जेएनयू एक नई दुनिया ही थी) यहां मैंने कई चीज़ें सीखीं और ख़ुर्शीद मेरा मार्गदर्शक था। मैं अपनी कुछ यादों को उन सबसे साझा करना चाहती हूं जो उसे अलग तरीकों से जानते रहे हैं।

स्कूल के बाद मेरे लिए साहित्य का मतलब था 'मिल्स एंड बुन'। ख़ुर्शीद का कमरा किताबों से भरा था जो मुझे अचंभित तो करती थीं पर मेरी मतलब की नहीं थीं। वह मुझे एक बार में एक किताब देता था (मार्क्स, लेनिन, दोस्तोव्स्की...) और इसने मुझे एक नया नज़रिया दिया, किताबों, लेखकों और उनकी सोच को जानने, समझने की नई दृष्टि दी। यह सब ख़ुर्शीद की वजह से। आज ख़ुर्शीद के द्वारा तोहफे में दी गयी कई किताबें मेरे अपने पुस्तकालय में हैं।

1984 दिल्ली दंगे - मैं ज.ने.वि. (जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय) की एक वालंटियर के तौर पर कपड़े इकट्ठा करना, चंदा इकट्ठा करना और दंगा पीड़ितों के शिविरों में जाना जैसे कामों में जुड़ी थी। मैं यह सब देखकर बहुत विचलित थी और मेरे ज़ेहन में कई सवाल थे - इन सब सवालों का जवाब मुझे मिला ख़ुर्शीद से। सत्ता के विभिन्न आयाम राजनीति, जाति, वर्ग के वे जीवन से जुड़े अभ्यास थे। मुझे याद है इसके बाद मैं बहुत बीमार हो गई। मुझे तेज़ बुखार था जो ठीक नहीं हो रहा था। उसने मेरे अभिभावकों को सूचित किया और मुझे घर तक छोड़ने देहरादून आया। मेरे लिए वह लोकल गार्जियन, एक ख्याल रखने वाला दोस्त, कॉमरेड और एक भाई था।

ऐसा माना जाता था कि वह अपनी आलोचना करने वालों को स्वीकार नहीं करता पर अपने एक आलोचक के रूप में उसने मुझे हमेशा स्वीकारा। जब भी मैं उसके बारे में कुछ नकारात्मक सुनती मैं पुरज़ोर तरीके से यह कह सकती थी कि मैं उसके बारे में क्या सोचती हूं। वह धर्म, राजनीति और संस्कृति के मुद्दों पर वाचाल और स्पष्टवादी था। वह उतनी ही आसानी से अच्छे दोस्त बना सकता था जितनी आसानी से दुश्मन।

करीब 10 साल पहले जब मैं अपनी ज़िंदगी की रफ़्तार और उसकी गलत दिशा से बेहद विचलित, नाराज़ और परेशान थी मैंने उससे बात की, अपने तनावों और तक़लीफों को बांटने के लिए। ख़ुर्शीद, तुमने मुझे एक नोट भेजा विरेचन पर, कि कैसे यह हमारी ज़िंदगी के लिए बेहद ज़रूरी है। तुमने क्यों नहीं बाँटा वो सब कुछ जो तुम्हारी ज़िंदगी में चल रहा था और अगर तुम पर इल्ज़ाम लगा ही दिया गया था तो उन परिणामों को झेलने के लिए तुम क्यों नहीं खड़े रहे? तुम्हारे जैसे एक संवेदनशील, जानकार शख्स का यह अंत तो नहीं होना था।

ख़ुर्शीद आखिर तक वैसा ही रहा; उसके आंतरिक मूल्य और विश्वास, ज्ञान और संगीत के लिए उसका आवेग, विवादित मुद्दों पर निडरतापूर्वक लिखना, दोस्त बनाना और ज़िंदगी जैसी सामने आए उसे स्वीकारना।

वो मेरा देवर, मैं उसकी भाभी!

■ विभा

''तुम साज़िशें रचो। क़लम नहीं रुकेगी।" यह कहना है ख़ुर्शीद अनवर का। आप उनके फेसबुक स्टेटस पर इसे देख सकते हैं। यही नहीं, और न जाने कितनी बातें, कितने सवाल, जिनके जवाब किसी के पास नहीं। शायद इन्हीं जवाबों की खोज में वह बेचैन रुह की तरह फेसबुक और इधर-उधर भटकता रहा और मौकापरस्त अपनी चाल में कामयाब हो गए।

ख़ुर्शीद को मैं वैसे नहीं जानती। मेरी उसकी मुलाकात बमुश्किल चार-पाँच बार हुई होगी और बातचीत भी शायद उतनी ही बार। उसके और हमारे बीच के रिश्तों की कड़ी रहे अजय ब्रह्मात्मज, जिनके साथ ब्याह कर अप्रैल, 1983 में मैं जेएनयू पहुँची थी। कभी पढ़ने जाना चाहा था जेएनयू। मगर घर की बन्दिश आज भी वहाँ न पढ़ पाने की टीस देती रहती है। मैं जेएनयू विद्यार्थी बनकर तो नहीं पहुँच पाई, मगर वहाँ के छात्रों की भाभी बनकर ज़रुर पहुँच गई। वहीं मिले ख़ुर्शीद, संजय चौहान, सिरोही, सुमन (चन्द्र प्रकाश झा), सन्ध्या चौधरी, नागू दा, अमिताभ बच्चन आदि। विपरीत परिस्थिति में हुई शादी से घबराई और पहली बार महानगर पहुँची मैं दिल्ली और इन सबके बीच सामंजस्य नहीं बिठा पा रही थी। मन में एक बडा धड़का लगा रहता था कि ये सभी जेएनयू के हैं। तो जाहिर है, बड़े मेधावी होंगे और इन सबके बीच बिहार के एक छोटे से विश्वविद्यालय से निकली मैं!

ख़ुर्शीद ने जब पहली बार "नमस्ते भाभी" कहा, तो झिझकते हुए मैने उसकी नमस्ते का जवाब दे दिया। कहा कुछ भी नहीं, लेकिन उसी समय मैं उसकी आवाज़ पर मुग्ध हो गई। रेडियो से तुरंत-तुरंत निकली थी, सो अच्छी आवाज़ क्या होती है, पता था। बाद में मैंने उसे कई-कई बार कहा कि "यार, क्या गजब तुम्हारी आवाज़ है! लेकिन उस समय! एक कस्बाई डर कि किसी दूसरे की तारीफ पर पता नहीं, अजय क्या सोचें!"

उस समय दिल्ली छूट गई कुछ ही दिनों में। उसके बाद फिर दिल्ली आई 1986 में। तब अजय चीन चले गए थे। उनसे मिलने मैं भी चीन चली गई और लौटी 1987 में। मुंबई आने के पहले 1989 तक दिल्ली में रही। इस बीच ख़ुर्शीद से शायद एकाध बार मुलाकात हुई। मैं अभी तक अपने कस्बाई संकोच में रही और कभी खुलकर उससे बातें नहीं की। शायद उसने भी इसे महसूस किया हो और लगा हो कि इसके साथ क्या बात की जाए!

ख़ुर्शीद से पहली बार और खूब देर तक बातें हुई, जब वह कुछ साल पहले मुंबई आया था। हम सभी संजय चौहान के घर बैठे थे। पूरी रात। मेरा रेडियोपन जाग गया था और मैं इतने सालों बाद उसकी आवाज़ फिर से आमने-सामने सुन पा रही थी और उसका लुत्फ उठा रही थी। पूरा गैंग ही चूंकि जेएनयू का था, इसलिए बातचीत का फोकस जेएनयू और उनकी दुनिया से सम्बन्धित था। गैर जेएनयू वाली केवल मैं थी। लेकिन, मुंबई में पहली बार "रियल एंजॉय" मैने उस दिन किया। इन लोगों की संगत में सुबह के चार कैसे बज गए, पता ही नहीं चला। दिमाग की सारी जकड़ी नसें खुल रही थीं और मैं किसी ऐसी दुनिया में पहुँच गई थी, जहाँ विचार थे, अभिव्यक्ति थी और उन सबके बीच खुले ठहाके और निखरी सम्वेदनाएं। यही तो वो बात थी, जिसे मैं अपने जीवन में चाहती रही और

जिसकी खोज में आज तक हूँ। पहली बार रात भर जगने की थकान बदन पर तारी नहीं हुई।

खुर्शीद ने उस शाम उन पलों को भी याद किया, जब अजय चीन जा रहे थे और मैं ‘‘पिया को विदा” करने के रूमानी भाव से भरी दिल्ली पहुँच गई थी, बगैर यह सोचे कि दिल्ली छोडकर चीन जाने की व्यस्तता में मैं उनके लिए कुछ और दिक्कतें ही खडी करूँगी। अजय ने खुर्शीद और शायद सुमन से इस दिक्कत का ज़िक्र किया था। बेटी तोषी भी साथ में थी और ससुर जी भी। खुर्शीद ने तोषी की तस्वीरें लीं थीं। उसे देखते ही कहा था कि “अरे, यह तो एकदम रशियन लगती है।”

इन सबके बावजूद मुझे कभी ऐसा नहीं लगा कि खुर्शीद के साथ बातचीत का सिलसिला शुरु किया जाए। उसने वादा किया था कि अबकी वह मुंबई आएगा और कुछ दिन साथ रहेगा। मैने सोचा था कि अबकी हम कुछ और बात कर सकेंगे, खास कर मैं अपनी संस्था ‘अवितोको’ के बारे में उससे बातचीत को लेकर उत्सुक थी। लेकिन वह नहीं आया, केवल उसके वादे आते रहे। मुझे भी आज की व्यस्त जिन्दगी का अन्दाज़ा है, इसलिए इस बात पर कभी भी बुरा नहीं मानती। लेकिन, बुरा माना था, जब मेरी बेटी की मंगनी पर वादा करके भी नहीं आया। उससे भी अधिक बुरा माना, जब वह उसकी शादी पर भी नहीं आया। अपने अभिमान में भरकर मैंने फेसबुक पर भी उससे बातचीत बन्द कर दी। उसे भी इसका इलहाम हो गया था। कई बार माफी माँगी। फिर, आखिरकार हिन्दुस्तानी दिल! मान ही गया बिचारा!

हम एक-दूसरे के और करीब आए फेसबुक के माध्यम से। हमारी उसकी छेडखानी एकदम यूपी-बिहार के देवर-भाभी की तरह चलती रहती। वैसे भी वह इलाहाबाद (यूपी) का था और मैं मधुबनी (बिहार) की। मेरी तस्वीरों पर उसके कमेंट मन को गुदगुदाते। कभी-कभी वह मुझे अजय से अधिक सुन्दर और समझदार का खिताब दे देता और मैं मन ही मन अपने इस देवर पर वारी-वारी जाती। लगता कि कोई तो है, जो मुझे मेरे पति से अधिक काबिल और समझदार मानता है।

अब तक नाराजगी का सारा ठीकरा मैंने ही उठा रखा था। लेकिन, इस बार वह भी हो गया- जबर्दस्त। वह मेरी कुछ बातों का जवाब नहीं दे रहा था और मेरी पोस्टों पर अपने देवरपन में कमेंट कर रहा था। इससे चिढ़कर मैने लिख दिया कि तुम भी फेसबुकिये हो गए हो। वह एकदम से उखड़ गया - “मुझे फेसबुकिया बोला! अब मैं कोई बात नहीं करूँगा।” और सचमुच उसने मेरी पोस्ट पर कमेंट या उसकी पोस्ट पर मेरे कमेंट्स का प्रतिसाद लेना-देना बन्द कर दिया। मेरे मन को बडा धक्का लगा। लगा, जैसे सच में किसी अपने ने कलेजे का कोई हिस्सा काटकर अलग कर दिया हो। मेरे अन्दर एक बहुत बड़ी खराबी है, किसी को जल्दी सॉरी न बोलने की। मैने खुर्शीद से सॉरी तो नहीं बोला, लेकिन उसकी पोस्ट पर कमेंट या लाइक करने लगी। फिर वह भी आ गया रस्ते पर!

मेरी उसकी नाराजगी कई और मुद्दों पर भी हुई, लेकिन इकतरफा। पिछले साल अपने नाटक को लेकर मुझे ढाका जाने का आमंत्रण मिला। लेकिन, जैसा कि थिएटर में होता है, आयोजक मेरे जाने-आने का भी खर्चा नहीं दे पा रहे थे। खुर्शीद ढाका जाता रहता था। मैंने उससे कुछ मदद मांगी, ताकि ढाका में शो के साथ-साथ वहां के संगठनों आदि के साथ मुख़ातिब हो सकूं, वहां के सामाजिक हाल जान सकूं और इस तरह से कम से कम आने-जाने का खर्चा मैनेज हो सके। उसने वादा किया और चुप बैठ गया। मैने फिर मुँह फुला लिया। लेकिन, बाद में सोचा कि अगर वह कुछ नहीं कर पाया तो इसमें उसकी क्या गलती है! यही मुंहफुल्ली उसके साथ मेरी रही उसकी संस्था के वर्कशॉप्स को लेकर, जहां मैं भी लोगों के साथ इंटरैक्ट करना चाहती थी या थिएटर आधारित अपने डिजाइन के साथ उसके साथ काम करना चाहती थी। लेकिन, उसने मुझे कभी आमंत्रित नहीं किया। मुझे यह अपनी मेधा पर हमला लगता रहा। लेकिन, कहा न कि मैं खुद ही इन सबकी विवेचना करती रहती और अपने गुस्से को पिघलाती रहती। मेरी नाराजगी कुछ दिनों तक बनी रहती। उसकी पोस्ट मुझे बेचैन कर देते और फिर से हम देवर-भाभी बन कर एक दूसरे को चिढ़ाने-खिझाने लगते।

खुर्शीद बहुत ज़हीन है। उसके आचार और विचारों का खुलापन मुझे खुशी देता तो कभी डर भी पैदा करता। सोशल साइट्स तो खुद ही जज बन जाते हैं। ऐसे में उसके बिन्दास पोस्ट्स! मैं उसके सारे तो नहीं, मगर कुछ पोस्ट्स पढ़ती। कभी कभी कमेंट करती, मगर अधिकतर लाइक करती या पढ़कर चुपचाप निकल जाती। कभी-कभी अजय से चर्चा करती। उसके पोस्ट उसके मन का आईना हैं। अपने ही देश में आज मुसलमान होना एक जहालत से कम नहीं। बड़े आराम से लोग इनको गालियाँ देते, हिकारत से देखते निकल जाते हैं। मुसलमान होना कितना भयावह हो गया है, इसको मैंने 1992 के बाबरी मस्जिद विध्वंस और 1993 के मुंबई बम ब्लास्ट के समय शिद्दत से महसूस किया। मेरे एक सहयोगी फिरोज़ अशरफ अपना घर बेचकर मुसलमान बिल्डिंग में आ गए। बान्द्रा स्टेशन से आगे बढती बुर्काधारी औरत सडक पर चल रही महाआरती से थरथराती रास्ता पार करती डर से पीली पडी हुई थी। हमारे पहचान के मंजूर की तो पूरी गृहस्थी ही उजड़ गई। मैंने जलते

ऑटो देखे, बन्दूक से छूटती गोलियों की आवाज़ें सुनीं। धर्म को लेकर मन में सम्मान अभी भी है, मगर धर्म के नाम पर इस अमानवीय आचरण करने वालों से नफरत आज भी उसी हद तक है, जितनी चिढ़ तथाकथित मार्क्सवादियों से है, गोया मार्क्स मेरे बहुत प्रिय हैं। ख़ुर्शीद कहता कि चूंकि कहीं ना कहीं पैदा तो होना ही था, सो मैं एक मुसलमान के घर पैदा हो गया। इससे मैं मुसलमान नहीं हो गया। वह फख्र से लिखता कि मेरे दोस्त हिन्दू हैं, मेरी भाभी हिन्दू है। मुझे बड़ा अच्छा लगा कि भाभी के रूप में उसने मुझे टैग किया हुआ था।

ख़ुर्शीद के लिए देश और इंसान सबसे अहम है और वह इसी को बताने की जिद से भरा हुआ। वह सोमनाथ चटर्जी का वक्तव्य पोस्ट करता है, "सोमनाथ चटर्जी ने अमरीकी यात्रा यह कह कर करने से मना की थी कि सोमनाथ चटर्जी एक व्यक्ति के रूप में किसी हवाई अड्डे पर पूरी तलाशी दे सकता है। मगर लोकसभा अध्यक्ष के रूप में ऐसा होने देना पूरे देश का अपमान है।"

महिलाओं की स्थिति पर वह हमेशा परेशान रहता था और खास कर धर्म के नाम पर उनके साथ होने वाली ज्यादतियों पर। ''धार्मिक कट्टरता जब तमाम सीमाएं तोड़ने लगती है तो सबसे पहले महिलाओं को निशाने पर लेती है। कभी उनका पूरा दमन करके कभी उनको इस्तेमाल करके।'' अपने यहां एक फर्क़ यह भी है कि जब महिलाएं महिलाओं पर लिखती हैं तो उनके लेखन को फेमिनिज्म से प्रेरित मान उन्हें फेमिनिस्ट का फतवा दे दिया जाता है। पुरुष जब लिखते हैं तब वे प्रगतिशील कहलाते हैं। मैंने गौर किया है कि पुरुषों के ऐसे आलेख अख़बारों के सम्पादकीय पन्ने पर छपते हैं, जबकि महिलाओं के लेख महिला पन्ने या घर-बच्चों के पन्ने पर। गनीमत है कि ख़ुर्शीद उन छद्म महिला रक्षको में से नहीं है। निर्भया/दामिनी कांड के समय उसकी संवेदनशीलता से भरे पोस्ट और आन्दोलन में उसका बढ-चढ़कर हिस्सा लेना यह बताता था कि वह बलात्कार जैसे मुद्दे पर कितना संवेदनशील और गम्भीर है। वह मानता है कि "सांप्रदायिक हिंसा में बलात्कार जैसे अहम हिस्सा बन चुका है। मुज़फ्फरनगर हिंसा के बाद आज पाँच औरतों ने बलात्कार की रिपोर्ट दर्ज करवायी। कुंवारी लड़कियों को उनके घरवाले रिपोर्ट करने नहीं दे रहे। मगर घटनाएं बड़ी तादाद में हैं। दंगा हो या युद्ध।" एक पोस्ट में वह लिखता है कि "आठ अप्रैल 1994 को संयुक्त राष्ट्र ने मानवाधिकारों से संबंधित रिपोर्ट पेश की, जिसमें अफगान तालिबान ने महिलाओं पर जो बंदिशें लगाई, उनकी एक लंबी सूची है।'' सूची की चन्द मदों को पढ़ते हुए जी थरथराने लगा।

ख़ुर्शीद के पास पता नहीं, दिमाग के कितने खाने थे और उन सबमे कितनी उम्दा बातें, यह तय कर पाना मुश्किल था। हिन्दी, उर्दू और अंग्रेजी पर उसकी समान पकड़, ग़ज़लों, कविताओं पर तीखी नज़र, सन्दर्भ के साथ-साथ एक से एक रचनाकारों, कवियों, शायरों को उद्धृत करना, साहित्य और समाज पर अपनी बात रखते हुए अचानक से माहौल को हल्का करते हुए एकाध पोस्ट लिख मारना- "वसंत कुञ्ज के जिस ब्लॉक में मैं रहता हूँ, वहाँ भक्तनों का एक समूह है। नवरात्रों में सुबह हराम कर देती हैं। दिन भर गाती हैं भक्ति से ओत प्रोत गीत। अजीब बात है कि यह सात आठ महिलाएँ इतनी बेसुरी और कर्कश आवाज़ वाली हैं कि आप को पचास कव्वों की काएं काएं ज़्यादा बेहतर, बल्कि सुरीली लगेगी। एक जगह पर ऐसी गाने वाली महिलाओं का एक साथ होना चमत्कार है। ऊपर से एक कोई शंख बजाता है। जैसे ट्रक का साइलेंसर फट गया हो।"

उसे हर धर्म और साहित्य का पता था, खास तौर से हिन्दू और मुस्लिम धर्म का। उसने एक जगह लिखा कि "विजय दशमी पर हर जगह राम का एक ही रूप व्याप्त दिखता है। रौद्र, वीरता आदि के आगे निर्मल कोमल शांत, क्रोध के हरने वाले राम को याद करो।

सर्वसुख धाम गुणग्राम विश्रामपद नाम सर्वसम्पदमति पुनीतं

निर्मल शांत सुविशुद्ध बोधयातन क्रोध मद हरण करुणा निकेतं (तुलसी। विनय पत्रिका)

मैं अक्सर आशंकित होते हुए अजय से कहती - "ख़ुर्शीद इतने बेबाक तरीके से लिखता है। यह कबीर वाला समय थोड़े है। लोग उसे मार डालेंगे।" और यही हुआ। जिस तरीके से उसे घेरा गया, एक न दिखने वाला जाल बुनकर, आज मन बार-बार पूछना चाहता है कि अब कहां गए वे लोग, जिन्होंने उस पर इतने इल्ज़ाम लगाए कि वह दुनिया से ही तौबा कर बैठा। थोड़ा अवसादवादी था, लेकिन, इतना भी नहीं कि दुनिया से गुज़र जाने की ही सोच ले।

आज मैं खाली मन, खाली हाथ, खाली विचारों से भरे नुक्सान के एक ऐसे टीले पर बैठी हूँ, जहाँ केवल ख़ुर्शीद ही राहत दे सकता है। मेरा मन आज भी यह मानने को तैयार नहीं कि वह अब नहीं है। इसलिए अपने भाव लिखते समय मैने उसके लिए भूतकाल का प्रयोग नहीं किया है। उसी की लाइन उसी को दे रही हूँ और दुआ कर रही हूँ कि ख़ुर्शीद ! आ भी जाओ यार! कोई नहीं है अब मुझे उस तरह से भाभी बुलाने वाला, मेरे चरण स्पर्श करने वाला, मुझे सुन्दर करार देने वाला और मेरी गतिविधियों पर मुझे शाबाशी देते हुए खुद को गौरवान्वित महसूस करने वाला। आ जाओ मेरे देवर जी, बस आ भी जाओ!

ख़ुर्शीद सर की याद में...

■ विशाल सिंह गौतम

लेकिन मैं यहाँ फिर आऊँगा
बच्चों के दहन से बोलूँगा
चिड़ियों की ज़बाँ से गाऊँगा
जब बीज हँसेंगे धरती में
और कोंपलें अपनी उँगली से
मिट्टी की तहों को छेड़ेंगे
मैं पत्ती-पत्ती कली-कली
अपनी आंखें फिर खोलूँगा
सरसब्ज़ हथेली पर लेकर
शबनम के क़तरे तोलूंगा
मैं रंगे हिना आहंगे ग़ज़ल
अंदाज़े-सुखन बन जाऊँगा।

ख़ुर्शीद सर हमारे बीच एक गार्जियन और मार्गदर्शक के रूप में थे। हमें जहां ज़रूरत पड़ती वह हम लोगों को सही रास्ता दिखाते थे। फिर वह ज़रूरत चाहे कार्यक्षेत्र में हो या परिवार में। चाहे जितनी गल्ती करते वह हमें प्यार से समझाया करते थे। चाहे छोटे बच्चे हों, नौजवान हों या बुजुर्ग हों सबके साथ समान सम्मान और दोस्ताना रवैया रखते थे।

मेरी पहली मुलाकात ओड़िशा में हुई थी। जहां मैं साझी विरासत की कार्यशाला में शामिल होने के लिए गया था। इनकी सूरत मेरे पिताजी से मिलती है। मेरे दोस्त जितेंद्र ने उनसे यह बात कही तो उन्होंने हँसते हुए कहा कि मैं उसका पिता नहीं हूँ। इनका दर्जा मेरे जीवन में पिता के समान ही है। एक मार्गदर्शक, प्रेरणास्रोत, अच्छी बातें और अच्छा रास्ता दिखाने वाले।

उस मुलाकात के बाद जब भी वह इलाहाबाद आते तो बिना उनसे मिले रहा न जाता और मैं खुद-ब-खुद उनके पास खिंचा चला जाता। सबको वह बराबर का सम्मान देते चाहे वह झोंपड़पट्टी का कोई साथी हो या हमारे परिवार का कोई सदस्य।

सांप्रदायिकता, जात-पात, लैंगिक भेदभाव या किसी भी तरह के भेदभाव पर वह हमेशा हमला बोला करते थे। चाहे लिखकर, चाहे कार्यशाला करके, चाहे सड़क पर उतर के या माघ मेले (इलाहाबाद) में सिरजन करके। सांप्रदायिकता के मसले पर वह देश ही नहीं पूरे विश्वभर में क्या-क्या घटनायें घट रही हैं उन पर लिखने और हम लोगों से बताने में कभी कोताही नहीं बरतते थे। लैंगिक भेदभाव के मसले पर चाहे वह इलाहाबाद की झोंपड़पट्टी की महिलाओं के साथ छेड़छाड़ या बलात्कार हो या दिल्ली के 16 दिसंबर 2012 की घटना हो वह पीड़िता को न्याय दिलाने के लिए हम लोगों का उत्साहवर्धन किया करते थे और खुद दिल्ली की सड़कों पर प्रदर्शन आदि में शामिल होते थे। एक बार की घटना जब हम लोग इलावर्त इलाहाबाद में सर के साथ एक कार्यशाला में ट्रेनिंग ले रहे थे तब होटल के पीछे बस अड्डे पर कुछ लोग एक महिला के साथ हाथापाई कर रहे थे तो हम साथी उस महिला को अपने साथ होटल में लाये। तब भी सर ने कहा कि इस महिला के लिए जितनी ज़्यादा से ज़्यादा मदद कर सकते हैं हमें करनी चाहिए। हमसे जितनी भी मदद हो सकती थी हम लोगों ने मदद की।

आज उनका शरीर हम लोगों के बीच नहीं है किंतु इनके द्वारा दिखाये गये रास्ते व सीख हमारे बीच जीवनपर्यन्त रहेगी। हम इन्हीं सीखों और रास्तों पर आगे बढ़ेंगे।

काटना पड़ता है तलवारों को तलवारों से
अपनी ताकत को जरा और बढ़ाना होगा
है ज़माने में तशद्दुद ही तशद्दुद का जवाब
जब्र से जुल्म की हस्ती को मिटाना होगा।

ख़ुर्शीद एक सच्चा इन्सान

■ शकील अहमद खां

ख़ुर्शीद अनवर के ना होने के मायने मेरे लिए एक बड़े भाई को खोना है। यह मेरी बहुत बड़ी निजी क्षति है। हमारी दोस्ती फेसबुक के ज़रिये शुरू हुई और फिर उनको पढ़ते समझते कब यह रिश्ता प्रगाढ़ हो गया पता ही नहीं चला। हाँ बिलाशक उनके साथ जिंदगी की समझ भी बड़ी हुई। वह बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी थे, विद्वान थे, साहित्य की गहरी समझ थी, अनुवाद लाजवाब करते थे, भाषाओं पर ज़बर्दस्त पकड़ थी, उनको पढना एक अनुभव से गुजरने जैसा होता था लेकिन इन सब खूबियों से अलग वह एक सच्चे इंसान थे। इंसानियत का जज़्बा उनमे कूट-कूट कर भरा हुआ था। मर्द औरत की समानता की बातें बहुत लोग करते हैं पर ख़ुर्शीद सर उसको जीते थे और आपको मजबूर कर देते थे इस मुद्दे पर सोचने को। आप उनसे मिलने के बाद पहले जैसे नहीं रह सकते थे। इतनी सब खूबियों के होने के बावजूद वह बहुत ही सरल थे, हर एक पर भरोसा कर लेते थे। वह उन लोगों के लिए भी अपने दिल के और घर के दरवाज़े खोल देते थे जो उनके लिए बुरी भावना रखते थे उन्हें अपना दोस्त नहीं समझते थे। यह भरोसा, यह दरियादिली, यह भोलापन उनके लिए जानलेवा साबित हुआ। जिस फेसबुक से वह हरदिल अज़ीज़ बने एक दिन उसी का इस्तेमाल उनके दुश्मनों ने उनके खिलाफ उनका चरित्रहनन करने के लिए किया। एक झूठा मनगढ़ंत प्रोपगंडा उनके खिलाफ बहुत ही शातिर तरीके से किया गया। यह बहुत बड़ी साजिश थी उनके खिलाफ क्योंकि वह हमेशा जीवन भर फ़िरकापरस्त साम्प्रदायिक ताकतों के खिलाफ मोर्चा लिए रहे, लड़ते रहे, उनको उनकी औकात बताते रहे। जब वह इन ताकतों से डरे नहीं; तब इन ताकतों ने उनके चरित्र को निशाना बनाया मीडिया ट्रायल के ज़रिये उनको घेरा और उनकी हत्या कर दी। मेरा बड़ा भाई शहीद हो गया उन सभी लोगों के लिए जो बराबरी, इंसानियत, जेंडर समानता के हिमायती हैं और धर्मान्धता के ख़िलाफ़ हैं। यह कभी न भर सकने वाला नुकसान है। खुशीद भाई आपकी शहादत ने मुझे इन ताकतों से लड़ने के लिए बहुत ताकत दी है। मै डरा नहीं हूँ। मै और मज़बूत हुआ हूँ, उन ताकतों को बहुत निराशा होगी जो आपको शहीद कर ऐसी ही और आवाजों को चुप करा देना चाहते थे। सलाम ख़ुर्शीद अनवर... यह लड़ाई आपके बाद भी जारी रहेगी यही आपको हमारी सच्ची श्रद्धांजलि है...

20/09/2013

ख़ुर्शीद तुम्हारी याद में

■ शन्नै नकवी

ख़ुदा ही बेहतर जानता है की तुम अपनी मोहनी सूरत को लेकर और मुझे तन्हा छोड़कर क्यों सिधार गए। लेकिन होशियार रहना मेरे अज़ीज़ कि मैं भी ज़्यादा ज़िंदा रहने को एक बहुत बेहुदा हरकत करार देता हूँ।

'ज़ुल्फों के बादल बिखराए जाने तुम किस देस बसे हो
ग़म की धूप उतर आई है जीवन की अँगनाई में।'

किस दिल से मैं तुम्हें भुला दूँ यह मैं तस्व्वुर भी नहीं कर सकता, हालाँकि तुम्हें भूल जाना ही मेरे लिये बेहतर होगा।

जो दाग तुम दे गए हो उसकी भरपाई करना कम-से-कम मेरे बस का रोग नहीं है। तुम मेरे लिये क्या थे इसका तस्व्वुर करना भी मोहाल हो गया है। बेटा अभी कल ही परसों की बात है कि हम तुम और दिगर दोस्त अहबाब तुम्हारे JNU वाले दौलतकदे पर हमप्याला और हमनिवाला हुए थे।

ये अचानक तुम्हारा चला जाना मुझे हर लहजा इस कद्र खल रहा है कि मैं लाख कोशिश के बावजूद भी इस असामायिक मौत से compromise नहीं कर पा रहा हूँ।

'बावजूद कि बाल-ओ-पर ना थे आदम के
वहाँ पहुँचा कि फरिश्ते का भी मुकद्दर ना था।'

ख़्वाजा मीर दर्द के इस शेर की तश्रीह शायद तुमने कर दी?

लेकिन ख़ुर्शीद क्या तुम्हें मेरा और दूसरे दोस्तों का ख़्याल बिल्कुल भी नहीं सता रहा है?

तुम मेरे उसी दोस्त की तरह हो जो मुझसे कहा करते थे 'भाई रोज़ पीते हैं कभी भी और किसी भी वक्त टपक पड़ा करो।'

मैंने उनसे कहा हुज़ूर टपकता तो आम है और वोह भी 'सीकल' गिरने के बाद। बोले 'भाई dewar's white horse पिलाऊँगा, आम और जामुन का यहाँ क्या तस्किरा?

मैंने कहा ठीक है मैं आऊँगा।

चुनांचे दूसरे दिन उनकी dodge गाड़ी मेरे दरवाज़े पर आकर ठहर गयी। दिन का वक्त था, वोह पहले मुझे sindh क्लब ले गए। bar पर पहुंच कर बोले "shanney your choice is my choice"

मैंने कहा बुखारी सहाब vodka पीने का मूड है। ... vodka के बाद मैं फित हो गया और वाहीन sindh क्लब में बैठे खलिद अली खान को रफी अहमद खान के कुच्छ चुनिन्दा अशार सुनाये।

उसके बाद बुखारी साहब मुझे बोट क्लब ले गए।

ख़ैर यह तो रही तफ्रीह की बात। ख़ुर्शीद मुझे तुम यह समझाओ कि मैं मीनाक्षी और समर को क्या मुँह दिखाउँ? फर्ज़ करो कि उन्होंने पूछा कि आप इतने अर्से कहाँ गायब थे और थोड़ा सा ख़ुर्शीद की मौत का ज़िम्मा आपके सर भी मढ़ा जा सकता है तो मैं उन्हें अलावा इसके क्या जवाब दे सकता हूँ कि :

"भरी आँखें कसू की पोंछते गर अस्तीन रखते
हुई शर्मिन्दगी क्या क्या हमें इस दस्त-ए-ख़ाली से"

मौज़ूँ शेर समझ कर पढ़ना हर एक नहीं जानता लेकिन तुम ख़ुर्शीद इस अनोखे फ़न से बख़ूबी वाकिफ थे.

जब भी मैंने तुम्हें फोन किया तुमने या तो मीर, ग़ालिब, इक़बाल, हाली और जोश ओ फ़िराक़ को सुनाया था. मुझसे इंशा की वोह नायाब ग़ज़ल सुनी के

'झूठा निकला करार तेरा
देखा बस हमने प्यार तेरा
इंशा से मत ख़फ़ा हो
है बन्दा जाँ निसार तेरा।'

और या फ़िराक साहब की यह नायाब ग़ज़ल
'है अभी महताब बाकी और बाकी है शराब
और बाकी तेरे मेरे दरम्यिान सधा हिसाब।'
इस हिसाब को कब चुकाओगे?

जवाब दो ख़ुर्शीद वर्ना मैं इससे भी बेहतर मजाज़ की अछूती ग़ज़ल छेड़ दूँ

'ये आना कोई आना है की बस रस्मन चले आये
ये मिलना खाक मिलना है कि दिल से दिल नहीं मिलता
वाह कितनों की तख़्त-ओ-ताज का अरमान है क्या कहिये
जहान-ए-सायल सायल को अक्सर कास-ए-सायल नहीं मिलता।'

मेरी बीवी भी तुम्हें बहुत याद करती है। याद आया कुछ ख़ुर्शीद?

. . . .

ख़ुर्शीद : एक लाजवाब फेसिलिटेटर

■ **तारिक ज़मन**
खैबर पख़्तूनख्वाह, पाकिस्तान

ख़ुर्शीद भाई से मेरी पहली मुलाक़ात 2007 में नेपाल मे हुई थी। जहाँ हम अमन के लिए साझी साझी विरासत के मुद्दे पर एक प्रशिक्षण कार्यशाला में भाग ले रहे थे। ख़ुर्शीद एक लाजवाब फेसिलिटेटर थे। एक नए नज़रिए के साथ प्रशिक्षण के बाद हम अपने-अपने देश और लोगों के बीच लौट गए। उन्होंने हमें दक्षिण एशिया में अमन की नातमाम उम्मीद में भरोसा रखना सिखाया। ख़ुर्शीद भाई को पाकिस्तान से भी प्यार था। वे हमेशा लाहौर आना चाहते रहे। पेशेवर रिश्ते के अलावा वे मेरे प्रति बहुत आत्मीय थे और इसकी एक वजह थी कि वह हमारे महान पश्तो राजनीतिक एवं आध्यात्मिक नेता बच्चा खान के बहुत बड़े प्रशंसक थे।

यह उनकी गर्माहट थी जिसकी वजह से मैं हिन्दुस्तान उनसे मिलने गया। इन मुलाक़ातों के बाद हम कई बार बांग्लादेश में मिले। अपनी इन सभी मुलाक़ातों में मैंने उन्हें हमेशा एक बहुत प्यारे दोस्त और एक बड़े इंसान के रूप में पाया।

जब मैंने पहली बार उनकी मौत की ख़बर सुनी मैं कुछ दिनों तक सदमे में रहा। मुझे अपने आप से कुछ सवाल पूछने थे। पहला, निजी तौर पर इस दिल तोड़ देने वाली मौत से मैंने क्या खोया, दूसरा, हम सामाजिक कार्यकर्ताओं ने क्या खोया और तीसरा, हम दक्षिण एशियाई लोगों ने क्या खोया... अभी भी मेरे पास वो शब्द नहीं हैं जो उस नुकसान को बयान कर सकें।

ख़ुर्शीद से अपनी पहली मुलाक़ात में मैंने मशहूर पश्तो शायर ग़नी ख़ान के ये बंद पढ़े थे, एक बार फिर मैं इन्हें उनके नाम करता हूं :

'मैं ख़्वाब देखता हूँ कि मंसूर की चीख की तरह मैं उठूँगा एक मुट्ठी धूल और मैं रोशनी का समुद्र बन जाऊँगा कि तभी सुनता हूँ मैं अजान की आवाज़ और घबड़ा के जग जाता हूँ। नींद ले जाती है अपने साथ ख़्वाब और दुनिया फिर मेरे सामने होती है कहते हुए कि 'सो जाओ ग़नी ख़ान, जेल में अपना वक्त बिताओ।'

कुछ बातें, कुछ यादें...

■ शैल

श्रुति,
आपने ख़ुर्शीद के बारे में कुछ लिखने को कहा है तब से कई बार लिखने बैठता हूँ पर लिख नहीं पाता। क्या लिखूँ और कैसे लिखूँ? (ऊपर से लेखक भी नहीं, लिखना तो ख़ुर्शीद का ही काम था)। कहना उसके बारे में चाहता हूँ पर कहूँगा अपने बारे में। ये जो मेरा नाम है 'शैल' ये भी उसी का दिया हुआ है। मेरा पूरा नाम शैलजानन्द है और ख़ुर्शीद से मिलने से पहले लोग मुझे शैलजा बुलाते थे।

उससे जान-पहचान जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय में 82 में हुई और जल्दी ही दोस्ती में बदल गई। ज़रूर कुछ और कारण रहे होंगे वरना वो ए.आई.एस.एफ. का काउंसिलर, सेक्रेटरी कैंडिडेट और क्या-क्या और मैं फ्री थिन्करों का साथी, वो नर्मदा हॉस्टल डाउन कैम्पस में रहने वाला और मैं कावेरी में। उन दिनों हम लोग अक्सर क्लब बिल्डिंग के कैंटीन और मदन की चाय से अपनी दोस्ती को सींचते रहे। वो कब मेरी सोच का हिस्सा बन गया था ये मुझे पता ही नहीं चला। अगर महीने दिन के लिए छुट्टियों में घर जाता था तो चिट्ठी पत्री भी लिखते थे एक दूसरे को। बाद में वो जब सतलज हॉस्टल आ गया तो हम दिन रात के साथी बन बैठे। 88 तक यही सिलसिला चला। फिर मैं विदेश चला गया। भारत लौटने की एक वजहों में से ख़ुर्शीद भी होता था। उसी के घर रहना होता था, पहले वसंत कुञ्ज में जहाँ 89 में समर पैदा हुआ था, फिर मुनीरका में, फिर कटवारिया में, फिर मैरिड हॉस्टल पूर्वांचल में, फिर गंगा हॉस्टल वार्डन के घर, फिर वसंत कुञ्ज में - वो जहाँ भी रहता वही मेरा घर होता।

उसे जानने वाले सब उसे अपने-अपने तरीके से याद करते रहेंगे लेकिन मेरी यादों में ख़ुर्शीद अनवर सामाजिक कार्यकर्ता की तरह उतना नहीं उभरता है जितना कि यारों का यार, सहज सरल, कुछ बातों पर, ज़िद्दी और कुछ बातों पर खुला, क्रिकेट का अच्छा जानकार और प्रेमी ख़ुर्शीद। उसकी आवाज़ बहुत ही खूबसूरत थी लेकिन वो सुर में गा नहीं पाता था। अपनी बेहतरीन आवाज़ में उर्दू शायरों की ग़ज़लों और शेरों को वो इस अंदाज़ से सुनाता था कि वो जीवंत हो जातीं थीं और गाना तो वह ऐसा गाता था कि न गाने के एवज़ में उसके एक ईरानी दोस्त (शायद मुर्तज़ा नाम था उसका) ने हम दोनों को मिल्कशेक पिलाया था। उसकी वो पहली कमाई रही होगी। बहुत दिनों बाद तक भी हम उस घटना को याद कर हँसते रहे। सतलज हॉस्टल में उसके कमरे में लेट कर (अपना कमरा ख़ुर्शीद बहुत ही साफ़ रखता था) हम उसकी आवाज़ में इब्ने इंशा को सुनते थे। उन दिनों उर्दू की आखिरी किताब का

नागरी में लिप्यान्तरण नहीं हुआ था और मुझे उर्दू पढ़ना नहीं आता था। याद आ रही है कि जिन दिनों वो पीएच.डी. लिख रहा था तब उसके कमरे पर देर रात एक दो दोस्तों के साथ दस्तक दे दिया करते थे और फिर साथ-साथ चाय पीने जाते थे। रात की चाय पीते-पीते हम भी आग का दरिया और कुर्तुल ऐन हैदर की और कृतियों को ख़ुर्शीद के मार्फ़त जानने लगे।

जब वह कटवारिया सराय के एक बाहर से बिना प्लास्टर लगे मकान के सब से ऊपर वाली मंज़िल पर रहता था तो उस तंग कमरे में पता नहीं कितने लोग जमा हो जाया करते थे। एक दिन याद है सब खाना खा रहे थे और कूलर और पंखे के बावजूद सबके पसीना चू रहा था। तभी कुछ बादल गरजे और बारिश शुरू हुई, हम छत की ओर भागे और साथ-साथ घंटों भीगते रहे। जब उसका पहला काइनेटिक स्कूटर आया था और उस पर चढ़कर घूमने में लगता था जैसे हाथी पर सवारी कर रहे हों। मेरी पत्नी ने भी उस स्कूटर पर सवारी की है।

उसे लोगों के बीच रहना पसंद था। कम से कम उन दिनों शायद ही कभी उसने बगैर किसी मेहमान के खाना खाया हो, और तुर्रा यह कि उसने मेहमानों को कभी मेहमान न माना। जो भी उसके घर आ गया वह दोस्त ही नहीं घर का आदमी हो जाता था। हाँ, कई बार वो मेहमानों से चाय तक बनवा डालता था। 'चलो यार थोड़ा टहल आएँ' के जुमले को सुनने के बाद वह कहने वाले की तरफ ऐसी हिकारत भरी निगाह से देखता कि कहने वालों को लगता था कि क्या कह डाला। टहलने आदि में उसकी कोई ख़ास दिलचस्पी नहीं थी, हालाँकि वह कई बार हम लोगों को योग के कई कठिन आसन भी दिखा देता था।

आमतौर पर यूरोप से हवाई जहाज दिल्ली तब उतरते थे जब पान की दुकाने बंद हो जाया करती थीं लेकिन टैक्सी से ख़ुर्शीद के घर उतरते ही उसके द्वारा मेरे लिए बनवा के रखा 'मेरा पान' मेरा इंतज़ार करता रहता था। कभी-कभी वह मेरा मन रखने के लिए पान खा भी लेता था। पता नहीं कब दिल्ली जाऊँगा पर इतना तो तय है ही कि कोई ये न कहेगा कि 'फ्रिज़ में पान रखा है, खा लेना।'

. . . .

ख़ुर्शीद सर एक बहुत अच्छे दोस्त

■ **प्रभा**

ख़ुर्शीद सर से मैं पहली बार कोणार्क में एक कार्यशाला में मिली थी। कोई भी सवाल करने पर सर कई उदाहरण दे कर समझाते थे। उनसे बातें करना अच्छा लगता था। कुछ साल बाद उनके साथ संगठन में काम करने का मौका मिला। कभी महसूस नहीं हुआ कि वह सर हैं। बराबरी से बैठते थे, सही गलत जो भी सवाल करते थे कभी बुरा नहीं मानते, बल्कि अच्छे से समझाते थे। उनमें एक अपनापन दिखता था। कभी किसी भी बात के लिए हम लोग उनसे लड़-झगड़ जाते थे। ऐसा लगता था कि हमारा एक और परिवार है जहां हम अपने मन की सभी बातें कह सकते थे। हमने कई संगठनों में काम किया और देखा कि मालिक और नौकर जैसा लोग व्यवहार करते हैं जो सर के अंदर कभी नहीं दिखा और हमेशा ऐसा लगता था कि सर एक बहुत अच्छे दोस्त हैं। अपने मन की बातें उनसे शेयर करने में कभी हिचक नहीं लगती थी बल्कि सूकून और खुशी मिलती। ख़ुर्शीद सर को हम हमेशा याद रखेंगे और हमेशा अपने पास पाएंगे जब भी किसी मुसीबत में होंगे उनकी बातों को याद करेंगे और उनके साथ बिताये हर पल को हम हमेशा याद रखेंगे और यह हमेशा खलेगा कि एक बहुत अच्छे दोस्त जो हमेशा के लिए हमसे दूर हो गये जिनसे हम अब कभी नहीं मिलेंगे। मगर उनकी यादें हमेशा हमारे पास होंगी।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी ख़ुर्शीद सर

■ **सरिता**

ख़ुर्शीद जी से मैं पहली बार होटल इलावर्त में मिली। पहली बार मैं अपने को बहुत असहज महसूस कर रही थी। मेरे बाकी साथी उनको पहले से जानते थे। लेकिन थोड़ी देर में साथ बैठने के बाद ख़ुर्शीद जी की बातें और सभी साथियों के साथ ही मेरा भी ध्यान देना। मेरे बारे में जानने का उनका प्रयास मुझे अच्छा लगा। उसके बाद सर जब भी इलाहाबाद आते मुझे पता चलता तो उनसे मिलने पहुँच जाती। धीरे-धीरे सर की बातें उनका व्यवहार मुझे बहुत अच्छा लगने लगा। एक बार मैं किसी परेशानी में थी। सर को पता चला तो मुझसे बात की। वह परेशानी मेरे काम को लेकर थी क्योंकि मैं पहले जिस संगठन के साथ काम कर रही थी वहाँ का माहौल बहुत असहज था। ख़ुर्शीद जी ने मुझे समझाते हुए मेरी हिम्मत और हौसले को बढ़ाया और अपने साथ आईएसडी में काम करने का मौका दिया। आईएसडी के साथियों के साथ मुझे एक अच्छे माहौल में काम करने का अवसर मिला। अगस्त 2013 की बात है जब इलाहाबाद में ट्रेनिंग ऑफ ट्रेनर्स (टीओटी) वर्कशॉप में मुझे भी बुलाया गया। उस ट्रेनिंग के दिनों के दौरान ख़ुर्शीद जी ने मेरे अंदर की छुपी हुई प्रतिभा को पहचानते हुए उसे निखारने का काम किया। क्योंकि उस ट्रेनिंग में ज़्यादातर लोग मुझसे सीनियर थे। काम के मामले में भी और उम्र में भी। लेकिन जब भी मेरी बारी आती सर का मेरे ऊपर ध्यान देना, मेरी हिम्मत बढ़ाना मुझे एक बढ़े हौसले के साथ अपने को आगे बढ़ाने की एक नयी शुरुआत थी। उसके बाद जब मुझे सहारनपुर एक ट्रेनर के रूप में बुलाया गया मेरे अंदर एक नई उमंग, नया उत्साह महसूस होने लगा। सहारनपुर में ट्रेनिंग के दौरान मेरे मन में सर की कही हुई वह बातें बार-बार ध्यान में आ रही थी जो एक अच्छे ट्रेनर को नहीं करनी चाहिए या ध्यान देनी चाहिए। सहारनपुर में ट्रेनिंग के दौरान ही सर का जन्मदिन था। फोन पर मेरी बात हुई थी। सर ने पहले ही वाक्य में कहा कि तुमको एक अच्छा ट्रेनर बनना है। और वह सर के साथ मेरी आखिरी बात थी। और क्या लिखूं ख़ुर्शीद सर को जानने-समझने और उनके नेतृत्व का मुझे बहुत कम अवसर मिला यह मेरा दुर्भाग्य है। ख़ुर्शीद सर एक बहुत अच्छे इंसान, दोस्त थे। समाज और दुनिया की कुरीतियों के बारे में उनकी समझ, उनकी लड़ाई सराहनीय है क्योंकि हर व्यक्ति के अंदर इतनी प्रतिभा का होना शायद नामुमकिन है। ख़ुर्शीद सर सर्वगुण सम्पन्न बहुमुखी प्रतिभा वाले एक युगपुरुष थे शायह यह कहना गलत नहीं होगा। मुझे इस बात का दुख हमेशा रहेगा कि सर ने मेरे साथ नाइंसाफी की। मुझे अपनी टीम में शामिल तो किया लेकिन बाकी साथियों की तरह मेरा मार्गदर्शन नहीं किया।

ख़ुर्शीद सर आपको मेरा कोटि कोटि नमन। मेरा यह वादा है आपसे कि आपके बारे में जितना भी जाना समझा है, आपके जीवन से कुछ सीख लेते हुए उसको अपने जीवन में उतारने का प्रयास करूंगी। ख़ुर्शीद सर आईएसडी की आन-बान-शान थे। एक घर की मजबूत नींव थे। अंत में बस इतना ही कि जो काम आप अधूरा छोड़ गये उसको हम सब मिलकर पूरा करने का प्रयास करेंगे। आप जहां भी हों ईश्वर आपकी आत्मा को शांति दे। आप हम सभी का मार्गदर्शन करते रहें। बस इतनी ही प्रार्थना है मेरी।

चिट्ठी न कोई संदेश, जाने वो कौन सा देश जहाँ तुम चले गये।

ऐ शरीफ़ इन्सानो

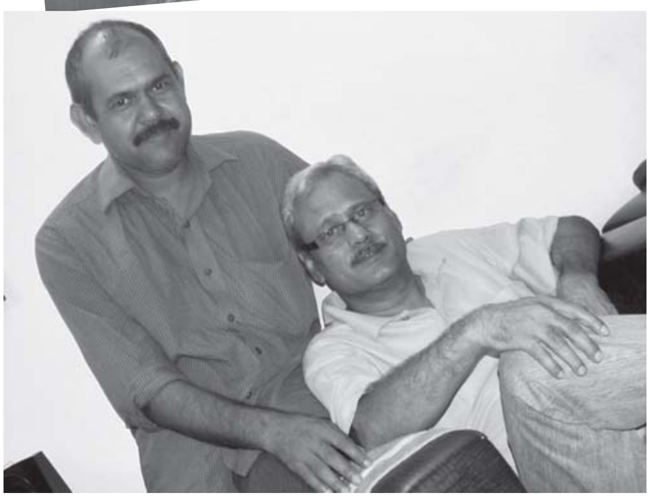

TOSHIBA

23/09/2013 18:14

ख़ुर्शीद : व्यक्ति और दोस्त

■ सरिता चौहान

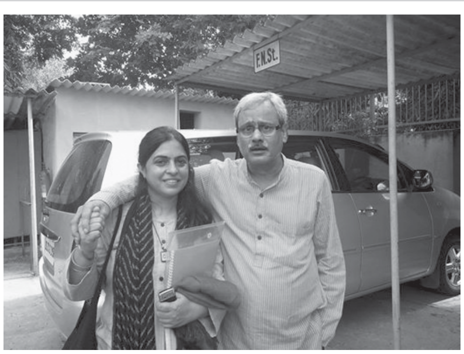

ख़ुर्शीद के ऊपर कुछ लिखना, आज जब वह हमारे बीच नहीं हैं, किसने सोचा था इस दिन के बारे में! हम सब ख़ुर्शीद को कट्टरपंथियों के खिलाफ़ तेज़ आवाज़ उठाने वाले एक साफ़गो और बहादुर इंसान के रूप में जानते थे। एक ऐसे इंसान के रूप में जो शांति और धर्मनिरपेक्षता के मूल्यों के लिए अनवरत काम करता है। मेरा उनसे जुड़ाव वर्ल्ड सोशल फोरम 2004 के अवसर पर मुंबई में हुआ था। वहां मैंने संस्कृति के भगवाकरण के विरुद्ध और इस्लाम, सिक्ख, बौद्ध, हिंदू और ईसाई धर्मों में निहित भाईचारे, समरसता, प्रेम और शांति के संदेशों के आधार पर एक इन्स्टॉलेशन बनाया था। वहीं से ख़ुर्शीद के मन में अंतर्धार्मिक संवाद को लेकर एक बुकलेट प्रकाशित करने का विचार आया। मैंने वह बुकलेट लिखी और चित्रित की थी। उसके बाद साझा संस्कृति और साझी विरासत के कुछ और प्रोजेक्ट्स पर हमने साथ काम किया। इन सारे वर्षों में धर्मनिरपेक्षता पर लिखने और उसके विचार को दक्षिण एशिया स्तर पर, ग्रास रूट पर फैलाने के काम में मैंने उनकी लगन और प्रतिबद्धता को क़रीब से देखा है। ख़ुर्शीद दिल से लोकतांत्रिक मूल्यों की इज्ज़त करते थे और व्यक्ति के न्याय और अभिव्यक्ति के अधिकार के पक्षधर थे। वह एक विनम्र और सरल इंसान थे और वह केवल विश्वास ही नहीं करते थे बल्कि व्यवहार में भी वे संवाद का ऐसा माहौल रचते थे जिसमें अहंकार और तानाशाही की कोई गुंजाइश न हो।

ख़ुर्शीद हर प्रकार की संकीर्णता और अंधश्रद्धा के खिलाफ़ थे। साथ ही वे दूसरों के विश्वास और परंपराओं का आदर भी करते थे। जब मैं उनके जन्मदिन पर आखिरी बार उनसे मिली तो मैंने उनसे कहा कि मैं एल्कोहल और नॉनवेज नहीं लूंगी क्योंकि मैंने अभी रेकी मेडीटेशन शुरू किया है। उन्होंने कहा कोई बात नहीं जूस और शाकाहारी खाना भी उपलब्ध है। यह सब मैं इसलिए बता रही हूँ ताकि मैं दिखा सकूं कि किस तरह वे दूसरों के भिन्न व्यवहारों की इज्ज़त करते थे।

एक दूसरे मौके पर मैं उनके साथ अपना एक अनुभव बाँट रही थी। मैंने उनसे बताया कि मेरे एक रिश्तेदार घर आए। उम्रदराज़ व्यक्ति होने के नाते मैं उनका सम्मान करती थी और उनके बच्चों से स्नेह करती थी। वह सज्जन मुसलमान समुदाय के खिलाफ ज़हर उगल रहे थे। ये किस्सा बताते हुए मैं फट पड़ी और बोली कि मैं उन सज्जन की बात को बर्दाश्त नहीं कर सकी हालांकि मैं उनके बच्चों से स्नेह करती हूं लेकिन अब मेरा उनसे भी कोई संबंध नहीं रहेगा। ख़ुर्शीद ने बहुत सहज तरीके से समझाया कि बहुत लंबे समय तक एक विचार में पके व्यक्ति का दिमाग़ बदलना आसान नहीं होता लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि तुम उनके बच्चों से प्यार करना छोड़ दो। मैंने कहा 'ये मेरा मतलब नहीं था बस गुस्से में यह सब कह गई।'

ख़ुर्शीद के साथ होते हुए या उनसे बात करते हुए मैं हमेशा सहज रही और अपने औरत होने को लेकर मुझे चौकन्ना नहीं रहना पड़ा। उनकी दोस्ती और उनकी शख़्सियत की यही ख़ासियत थी कि आप सहजता और इत्मीनान से रह सकते थे।

दोस्ती, प्यार और इज्ज़त के साथ मैं तुम्हें याद करती हूं ख़ुर्शीद।

ख़ुर्शीद को याद करते हुए

■ सलिल मिश्रा

इंस्टीट्यूट फॉर सोशल डेमोक्रेसी (आईएसडी) में ख़ुर्शीद की सहकर्मी श्रुति और उत्पला ने जब मुझे ख़ुर्शीद के बारे में कुछ लिखने को कहा तो मैं दुविधा में था। मुझे क्या लिखना चाहिए? क्या एक निजी विवरण या राजनैतिक विचारधारात्मक आलेख? आखिर के कुछ महीनों को देखते हुए इसकी एक निश्चित पृष्ठभूमि भी है। उसके दोस्तों में गुस्सा, बेबसी, अपमान और खो देने का एक अहसास है उन सारी घटनाओं पर या कहें घटनाओं के इस सिलसिले पर, जिसकी पराकाष्ठा थी ख़ुर्शीद का अपनी ज़िंदगी ख़त्म करने का फैसला। यह सब उसके एक्टिविज़्म, सांप्रदायिक हिंसा और महिलाओं के विरुद्ध हिंसा के उसके दृढ़ अभियान से भी जुड़ा था। मैं उन उद्देश्यों के बारे में लिखूं जिनसे ख़ुर्शीद की पहचान थी या उसकी शख़्सियत के बारे में लिखूं (जैसा मैंने उसे समझा)? हालांकि क्या इन दोनों को अलग-अलग करके देखना संभव भी है?

दिसंबर 13 तक ख़ुर्शीद की ज़िंदगी को घेरने वाली ये घटनाएं, इतनी तेज़ी से घटीं कि हमने पाया कि हमारी संवेदनाएं इन घटनाओं के पीछे घिसट रही हैं। ख़ुर्शीद के घनिष्ठ दोस्त भावनाओं के प्रवाह में थे-गुस्से से लेकर खोने तक। यह ज़बर्दस्त गुस्से और बेबसी से शुरू हुआ। गुस्सा टीवी चैनलों और सोशल मीडिया पर जो उन्होंने उसके साथ किया और बेबसी कि हम कुछ भी नहीं कर पाए। मुझ सहित हम में से कुछ लोगों ने उसकी ज़रब और दबाव को कम करके आंका।

ये सब गुस्सा और बेबसी 18-19 दिसंबर को हमें सुन्न कर दे रहा था। 19/12 को निगमबोध घाट पर एक साझा अपमान और दुःख के बीच भी अपने ज़ेहन में एक 'सांत्वना' का विचार आने से मैं ख़ुद को रोक नहीं सका। अगर ख़ुर्शीद ख़ुद 19/12 को वहां होता तो जिस तरह उसे निगम बोध घाट पर याद किया जा रहा था वह उसे पूरे तौर पर स्वीकृति देता। सैकड़ों लोग, सभी उसके दोस्त चिल्ला रहे थे 'कॉमरेड ख़ुर्शीद को लाल सलाम' यह ज़रूर उसके दिल को खुशी देता। वह अपने दोस्तों को प्यार करता था और उसे पसंद था कि उसे 'कॉमरेड' कह कर बुलाया जाए। उसके भीतर का कम्युनिस्ट अक्सरहाँ पृष्ठभूमि में चला जाता था पर कभी लुप्त नहीं हुआ। 'कॉमरेड' कह कर संबोधित किया जाना उसके लिए बड़ी बात थी। यकीनन कॉमरेड ख़ुर्शीद कह कर याद किये जाने को वह सकारता। यह अजीब है कि इन सबके बीच मैं किसी प्रकार की संतुष्टि महसूस कर पा रहा था। हम वाकई अपनी भावनाओं के गुलाम होते हैं। वे अपनी इच्छा से आती और जाती हैं।

ये उदासी और विषाद जल्द ही अलग-अलग जगहों पर हुई सभाओं में एक खालीपन के एहसास में बदल गईं। ये सभाएं एक कारण को समर्पित थीं और ख़ुर्शीद इन सभी नारों, निंदा और क्रोध के विस्फोट में कहीं दब सा गया। उसके दुश्मन- कुछ सामाजिक एक्टिविस्ट्स, टी.वी. चैनल और सोशल मीडिया ने एक बार फिर उसे मार डाला। उसके घनिष्ठ दोस्त अपने प्यारे पुराने दोस्त

ख़ुर्शीद को ढूंढ रहे थे। लेकिन ख़ुर्शीद तो एक कारण तक सीमित कर दिया गया था। एक कारण जो वाकई ज़िंदगी से बड़ा था। पर ज़िंदगी का क्या? एक ज़िंदगी जो हमारी ज़िंदगियों से चली गयी वह वाकई बेशकीमती थी। क्या हमारा इस पर अपने तरीके से शोक मनाने का हक़ नहीं था?

ख़ुर्शीद ने मुझ जैसे अपने घनिष्ठ दोस्तों के साथ वाकई अन्याय किया। उसने मेरे लिए ये मुश्किल बना दिया जिस तरह मैं उसे याद करना चाहता था। और इसलिए मुझे उसी तरह लिखना चाहिए जिस तरह मैं उसे याद करना चाहता था। मैं उस विषय और ख़ुर्शीद के अपने साहस और दृढ़ विश्वास के बारे में नहीं लिखना चाहता। पर फिर मैं ये भी नहीं लिखना चाहता कि मैंने क्या महसूस किया या मैं उसके बारे में क्या महसूस करता था। आखिरकार, इसे उसकी कहानी होना है, न कि मेरी। पर ख़ुर्शीद के बारे में मेरे विवरण में विचारधारात्मक और व्यक्तिगत अनुभव न हों तो फिर क्या बचेगा? मैं ये नहीं लिखना चाहता कि मैंने क्या महसूस किया, क्योंकि यह ख़ुर्शीद का नहीं बल्कि मेरा विवरण होगा। ये उसके प्रति ज़्यादती होगी। और मैं हद दर्जे तक इसके ख़िलाफ हूं कि उसे किसी अमूर्त मुद्दे तक उतार दिया जाए या बुलंद किया जाए। आखिरकार पिछले तीन दशकों से ख़ुर्शीद मेरा बहुत खास और प्यारा दोस्त था, जिसके साथ मैंने कुछ बेहद रोमांचक, नशीला और अद्‌भुत समय बिताया। उसका घर एक जगह थी या शायद एकमात्र जगह थी जहां मैं खुद को वाकई सहज, उनमुक्त और शांत महसूस करता था। इसलिए अब जबकि वो नहीं है मुझे उसके बारे में वैसे ही लिखना चाहिए जैसे मैं उसे याद करना चाहूंगा जो उसे नहीं जानते उन्हें उनसे परिचित कराने का ये मेरा तरीका होगा। मैं निश्चित रूप से ख़ुर्शीद को याद करूंगा ऐसे शख़्स के रूप में जो कई विरोधाभासों और असंगतियों को अपने भीतर लेकर चलता था। उसकी अपनी ज़िंदगी भी कई विरोधाभासों से घिरी थी। परस्पर विरोधी और असंगत परिस्थितियों से तो बड़े स्वाभाविक तौर पर उसका साबका पड़ता था और वह इनका सामना करता था बिना असंगतियों को सुलझाने की कोशिश किए।

80 के दशक के शुरुआती सालों में एक समय था जब वह धूम्रपान करने के बावजूद इससे मिलने वाले सुख को स्वीकार करने से कतराता था। उसे यह दिखाने में बहुत सुख मिलता था कि वह आसानी से अपने प्रलोभन को जीत सकता है। सतलुज हॉस्टल के अपने कमरे में किताबों की अलमारी के पीछे वह अपनी सिगरेट छुपा कर रखता था और ऐसा ज़ाहिर करता था जैसे कि वह भूल चुका हो कि उसके कमरे में सिगरेट है।

एक समर्पित और गर्वीला कम्युनिस्ट। जब उसकी सक्रियता एक कम्युनिस्ट कार्यकर्ता के रूप में कम हो गई थी तब भी उसे यह तमगा पहनना पसंद था। बड़ी आसानी से कम्युनिस्टों पर किए जाने वाले कुछ निश्चित प्रहार कर कोई भी उसे आहत कर सकता था। उसकी विवेक बुद्धि ही उसका विश्वास भी थी। पर एक ईमानदार कम्युनिस्ट के रूप में उसके दोस्तों की सूची आश्चर्यजनक रूप से विविधतापूर्ण थी। इसमें परंपरावादी कांग्रेसी, भाजपाई, अराजनीतिक लोग, नौकरशाह और कोई भी हो सकता था। वह कैसे इसे साधता था? जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय में AISF के बाहर उसके दोस्तों की संख्या ज़्यादा थी। वह उन सबके साथ एक ही साथ कैसे चल पाता था? क्या उसकी कुछ दोस्तियां झूठी और भ्रामक थीं? पर ऐसा लगता नहीं। ख़ुर्शीद अपनी सभी दोस्तियों को पसंद करता था और सबसे ऊपर अपनी बहुरंगी दोस्तियों का लुत्फ़ लेता था। ख़ुर्शीद के लिए यह कोई बहुत असामान्य बात नहीं थी कि वह एक ही समय में उन दो लोगों का बेहद नज़दीकी दोस्त हो जो एक-दूसरे को बर्दाश्त नहीं कर सकते।

उर्दू का एक बेहद ज़हीन और जाननहार विद्वान पर ख़ुर्शीद ने सिवाय अकादमिक ज़रूरतों (M.Phil और Ph.D.) को पूरा करने के कभी भी उर्दू में नहीं लिखा। उसने अपना सभी गंभीर लेखन या तो हिंदी में किया या अंग्रेज़ी में। तब भी उर्दू शायरी की जो गहरी समझ उसके पास थी वह दुर्लभ है। उर्दू में उसकी एक खोजी अंतर्दृष्टि थी। मैंने मीर तक़ी मीर को तो खुद से तलाशा पर गालिब, नज़ीर अक़बराबादी और फैज़ तक का सफ़र मैंने ख़ुर्शीद के साथ किया। बड़े करीने के साथ खुद की तारीफ करने का उसका गुण ग़ालिब से मेल खाता था और वो कभी भी इसका मज़ा लेने का मौका हाथ से जाने नहीं देता था।

एक सुबह उसने मुझे फोन किया और ग़ालिब की एक ऐसी ही विडंबनापूर्ण आत्म-प्रशस्ति में मुझे शामिल किया।

क़तरा अपना भी हक़ीक़त में है दरिया लेकिन
हमको तक़लीद-ए-तुनक ज़र्फ़ी-ए-मंज़ूर नहीं।

उसके अंदर साहित्यिक रसास्वादन और समाजशास्त्रीय समझ का एक दुर्लभ संयोग था। ख़ुर्शीद के पास यह बहुतायत में था पर फिर भी उसने कभी अपनी पीएच.डी. के अलावा उर्दू में या उर्दू पर कुछ नहीं लिखा। उसने उर्दू को अपने सांस्कृतिक,

साहित्यिक, राजनीतिक और अकादमिक जगत से इतना अलग कर क्यों रखा जबकि उर्दू उसे इतनी प्रिय थी। मेरे पास इसका सिर्फ एक तर्क है और वह यह कि ऐसे अंतर्विरोध उसके लिए बड़े सहज थे।

एक बहुत अच्छा दोस्त और बेहतरीन इंसान। उसके पास लोगों को पहचानने वाली पारखी नज़र थी (हालाँकि वह जल्दी-जल्दी अपनी इस समझ को दुरुस्त भी करता रहता था) वह इस बात को अच्छी तरह समझता था कि कोई भी शख़्स अपने आप में पूरा नहीं है इसीलिए दूसरों की (और खुद की भी) अपूर्णता को वह संवेदना और समानुभूति के साथ स्वीकारता था। फिर भी, इन सबके प्रति उसमें एक विशिष्ट असहिष्णुता थी। यह असहिष्णुता क्रोध के क्षणों में और दोस्तों तथा सहकर्मियों के साथ होने वाली कभी-कभार की लड़ाईयों में झलकती थी। मुझे ऐसा लगता है कि किसी से मिलने के फौरन बाद उस शख़्स के लिए उसके मन में एक सहज लगाव पैदा हो जाता था। इस लगाव के साथ ही वह उस शख्स से कुछ नैतिकताओं की अपेक्षा भी करने लगता था। अक्सरहाँ वह पाता था कि लोग नैतिकता के उस मानदंड का पालन करने में असफल साबित होते थे। दूसरों में नैतिक व्यवहार की इन कमज़ोरियों के प्रति वह अपनी नापसंदगी ज़ाहिर कर देता था और कभी-कभार वह इनके प्रति उदार भी होता था। पर लोगों के लिए उसके प्यार और उनके प्रति उसी हद तक असहिष्णुता या कुछ के प्रति किसी भी कीमत पर असहिष्णुता का यह बड़ा विरोधाभास मैं समझता था।

दोस्तों और परिवार के लिए उसकी धारणा भी मिली-जुली थी या मुझे ऐसा प्रतीत होता था। उसका निकटतम परिवार-मीनाक्षी और समर उसके घनिष्ठ मित्रों की तरह नहीं थे बल्कि उसके घनिष्ठ मित्र थे। समर उसका बेटा उसे 7-8 साल तक ख़ुर्शीद कहकर बुलाता था। मुझे लगता है कि दोस्ताना लहज़े में उसे पहले नाम से पुकारने के लिए ख़ुर्शीद उसे प्रोत्साहित भी करता था। बाद में समर ने उसे बाबा कहकर बुलाना शुरू किया तो एक सामाजिक बाध्यता में न कि मां-बाप द्वारा किए किसी समाजीकरण के कारण। मीनाक्षी भी एक दोस्त थी बल्कि एक बेहद बेहद खास दोस्त जो किसी भी और की तुलना में उसे बेहतर तरीके से समझती थी। मुझे लगता है कई मौकों पर यह उसे हतोत्साहित करता था। ऐसा भी वक्त था जब उसने गलत निर्णय लिये। या मैं ऐसा सोचता हूं। मैं चाहता था कि मीनाक्षी हस्तक्षेप करे और उसे वह करने के लिए प्रेरित करे जो मेरी समझ से उचित निर्णय था। मीनाक्षी उस हालात को और साथ ही उस समय की उसकी मनःस्थिति को भी किसी से भी बेहतर समझती थी और वह उसके साथ खड़ी रही। मैं इस बात से सहमत हूँ कि वह कुछ बड़े कदम इसलिए उठा पाया क्योंकि वह उसके साथ खड़ी थी और बड़े निर्णय लेने में उसकी मदद कर रही थी।

दोस्तों और परिवार के बीच में कोई फर्क न करने के अपने नुक़सान हैं। समर अक्सरहाँ ख़ुर्शीद को असंतुष्ट होने के मौके देता था। और ऐसे मौकों पर ख़ुर्शीद फौरन एक पिता बन जाता था जिसकी दुश्चिंताएं थीं जो बेटे को 'अनुशासित' करना चाहता था। पर यह मुश्किल साबित होता। ख़ुर्शीद या तो पिता हो सकता था या दोस्त पर एक ही समय में दोनों नहीं। एक तरह से एक ही साथ पति और दोस्त होना कम मुश्किल है पर एक ही समय में एक अनुशासित करने वाले पिता और एक करीबी दोस्त की भूमिका एक साथ निभाना टेढ़ी खीर है।

ख़ुर्शीद की सक्रिय ज़िंदगी संघर्ष और अपेक्षाकृत थोड़ा आराम के दिनों में एकदम साफ-सुथरे तरीके से बँटी हुई थी मेरे ज़ेहन में कोई द्वंद्व नहीं है कि उसके संघर्ष के दिन ही उसके अद्भुत रचनात्मकता के दिन थे। एक बार आईएसडी प्रमुख के रूप में जा बैठने के बाद दफ्तरशाही तरीकों से ज़िंदगी बदस्तूर चलने लगी। यह सब कहने का मतलब आईएसडी में किए उसके महत्वपूर्ण और सार्थक कामों को नकारना नहीं है। सबसे ऊपर उसने युवा अनुभवी लोगों की एक अच्छी टीम बनाई और उसे सींचा जो कि अपने पेशेवर ईमानदारी और विचारधारात्मक प्रतिबद्धता का मेल करने में सक्षम हैं। पर मुझे फिर भी इसमें कोई शुबहा नहीं कि ख़ुर्शीद के सर्वाधिक रचनात्मक वर्ष वे नहीं थे जब वह स्वैच्छिक संगठन की पतवार संभाले हुए था। उसके सबसे ज़रखेज़ साल सुरक्षा और विश्वास भरे सालों से पहले के जद्दोजहद और अनिश्चितता भरे साल हैं। इन असंगतियों के साथ रहना उसकी विशिष्टता थी। पैसे के मामले में वह सबसे उदार तब था जब उसके पास पैसे नहीं होते थे। वह बड़े आराम से किसी और को पैसे देने के लिए अपने किसी दोस्त से उधार मांग सकता था। बाहरी तनाव और वंचना के दौर में उसके व्यक्तिगत रिश्ते भी और बेहतर तरीके से पनपे। और जब इस वंचना ने आराम और सुरक्षा को रास्ता दिया ये रिश्ते निचुड़ने लगे। उसकी शख्सियत के बारे में यह कौन सी बात थी जो वह अलग-अलग परिस्थितियों में इतना असामान्य और परस्पर विरोधी प्रतिक्रियाएं अभिव्यक्त कर पाता था? या ऐसे ही ज़िंदगी

जीना उसकी नियति थी।

मेरे लिए सबसे दुखद और असहनीय विरोधाभास उसकी ज़िंदगी के आखिरी दिनों के हैं। इतने सारे दोस्तों, कॉमरेड, शुभचिंतकों, सहकर्मियों के बीच, सालों-साल की उसकी पूंजी रहे लोगों के बीच भी उसने खुद को अकेला पाया। ऐसा कैसे हुआ कि उसने खुद को इतना अकेला पाया, टी.वी. चैनलों का शिकार कुछ दूसरे लोगों की गलतफ़हमी को झेलते हुए और लांछित और अपने लोगों के बगैर? 18 दिसंबर, 2013 की सुबह वह इतना अकेला कैसे हो सका? कैसे? क्या इसमें कुछ बदल सकता था?

खुर्शीद अनवर ज़िंदगी से भरपूर था। और उसके पास बांटने को कितना कुछ था। उसने पाब्लो नेरूदा का अनुवाद किया अपने भीतर की अर्ज से। और कुछ उम्दा और सर्वाधिक मौलिक अनुवाद सामने आए जिनसे आपका वास्ता पड़ा होगा। एक आत्म-परिष्कार और सचेत प्रतिबद्धता के बल पर उसने अपने एक्टिविज़्म को रवां किया। उसकी आंतरिक विवशता और आत्मचेतन प्रतिबद्धता एक बिंदु पर एकाकार हो जाते थे एक समग्र और मौलिक और सार्थक और सामाजिक रूप से संगत जीवन को बढ़ावा देने को। ज़रूरत है इसे आगे बढ़ाये जाने की।

आईएसडी से उसके जुड़ाव ने उसे बेहद संतोष दिया था। इसने उसे एक असाधारण मौका दिया कि वह अपनी पेशेवर ज़िंदगी और अपनी वैचारिक ज़िंदगी का मेल कर सके। वह वाकई अपनी इच्छा के मुताबिक काम कर सकता था और उसे अलग से जीविका के बारे में सोचने की ज़रूरत नहीं थी। उसने प्रशिक्षकों और एक्टिविस्टों के लिए अमन, समरसता और जम्हूरियत के लिए साझी विरासत पर एक दस्ती किताब तैयार की। अगर वह किसी दूसरे पेशे में होता तब भी ऐसा कुछ करना हमेशा उसके दिल के करीब होता। पर अब वह इसे अपने पेशे के एक हिस्से के रूप में कर सकता था। उसका एक्टिविज़्म, वैचारिक प्रतिबद्धता और पेशेवर ज़िंदगी बेहतरीन तरीके से एक साथ घुल-मिल गए थे। उसने बड़ी संख्या में एनजीओ एक्टिविस्टों को प्रशिक्षित किया था और विभिन्न दक्षिण एशियाई समाजों की साझी विरासत के प्रति संवेदित किया था। उसने एक बड़ा काम किया था और उसका आनंद भी लिया। अपने काम और लेखन में प्रतिरोध की वह सार्थक ज़मीन तैयार की, जो किसी भी अन्यायपूर्ण कार्रवाई के खिलाफ शुरुआत करती। उसके इन कामों की अभी और ज़रूरत थी। अपने खिलाफ हुए एक अन्याय पर उसने समर्पण क्यों किया? अपनी दस्ती किताब और कार्यशालाओं के माध्यम से उसने सैंकड़ों एक्टिविस्ट्स को निरंतर प्रशिक्षित किया। अपनी सीख वह खुद क्यों भूल गया? क्या यह भी उसके तमाम विरोधाभासों में से एक था जिनके साथ जीने के लिए वह नियतिबद्ध था? क्या वह सिर्फ इस 'एक' से पार जा सकता था?

उसके बिना उसके दोस्तों की ज़िंदगी और ज़्यादा अकिंचन हो गयी। वह भी यकीनन अपने दोस्तों और अपने परिवार की कमी महसूस कर रहा होगा। क्या वह सरदार ज़ाफरी की उन पंक्तियों को याद करेगा जो उसने मुझे सिखाई थीं? उसने यह नज़्म आईएसडी की पत्रिका में छापी थी। उसने मुझे इसे सिखाया और हम इसे अक्सर एक साथ पढ़ते। यह उसकी पसंदीदा नज़्म थी। 'मेरा सफर' में सरदार ज़ाफरी यह कहते हैं कि अपनी मौत के बाद वे फिर लौटेंगे पर एक अलग छब में।

मेरा सफर

-सरदार जाफ़री

लेकिन मैं यहाँ फिर आऊँगा
बच्चों के दहन[1] से बोलूँगा
चिड़ियों की ज़बाँ से गाऊँगा.....
धरती की सुनहरी सब नदियाँ
आकाश की नीली सब झीलें
हस्ती से मिरी भर जाएँगी
और सारा ज़माना देखेगा
हर क़िस्सा मिरा अफसाना है....
मैं एक गुरेज़ाँ लम्हा हूँ
अय्याम के अफ़्सूँ-ख़ाने में
मैं एक तड़पता क़तरा हूँ
मस्रूफ़े-सफ़र[2] जो रहता है
माज़ी की सुराही के दिल से
मुस्तक़बिल के पैमाने में
मैं सोता हूँ और जागता हूँ
और जाग के फिर सो जाता हूँ
सदियों का पुराना खेल हूँ मैं
मैं मर के अमर हो जाता हूँ....

1. मुंह, 2. यात्रा में व्यस्त।

दोस्त ख़ुर्शीद

■ सीमा श्रीवास्तव

मैंने कभी सोचा नहीं था कि कोई ऐसा वक्त भी आएगा जब मुझे अपने दोस्त खुर्शीद अनवर के बारे में उनकी गैर-मौजूदगी में लिखना पड़ेगा। जब मुझसे कहा गया कि मैं अपने उनके साथ के कुछ अनुभवों को बाटूं तो घंटों सोचती रही, कई वाकये दिमाग में कौंध गये मगर उन्हें शब्द देना... मेरी क्षमता नहीं। लेखनी मेरी कला नहीं है और अपने व्यक्तिगत अनुभवों को बाँटने चलूं तो मेरे शब्द और भी ज़्यादा मौन हो जाते हैं। मगर अपने दोस्त की याद में कुछ न लिखूं यह भी गवारा नहीं। लगा कि खुर्शीद जी के बारे में कुछ लिखना चाहिए ताकि उनके व्यक्तित्व के कई वे पक्ष सामने आ सकें जो दुर्भाग्यवश एक यौन शोषण के केस के नीचे दब गये हैं। हालांकि अपराध अभी साबित नहीं हुआ है मगर जबसे घटनाचक्र सामने आया है सोशल मीडिया पर तरह-तरह के आरोप-प्रत्यारोप चल रहे हैं जो खुर्शीद जी के गुज़र जाने के बाद भी कायम हैं।

मैं खुर्शीद के उन तमाम दोस्तों में से एक हूँ जो चाहते हैं कि इस केस की गहरी, निष्पक्ष और सच्ची छानबीन हो ताकि शिकायतकर्ता और आरोपी दोनों के साथ न्याय हो सके। इस लेख में खुर्शीद के साथ रही मेरी दोस्ती, सह-कार्यकर्ता और प्रशिक्षक के अनुभवों के कुछ अंश हैं जिनका उद्देश्य है खुर्शीद की यादों को आप सबके साथ साझा करना।

2002 में गुजरात जनसंहार के बाद कई सामाजिक संस्थाओं ने सड़क पर उतर कर वहाँ होने वाले जनसंहार के विरोध में धरना, प्रदर्शन और सांप्रदायिक सद्भावना के लिए महीनों तक कई तरह की गतिविधियां चलाईं। महीनों मानो 'सड़क' हम सभी के घर बन गये थे। एक के बाद एक समूह का प्रतिदिन उपवास रखना, सारे दिन भाषण, सांप्रदायिक सद्भावना के गीत, नाटकों का मंचन और कई शामों और रातों को नारों के साथ रैली, हमारी कई महीनों की दिनचर्या बन गयी थी। यह सारी गतिविधियां अमन एकता मंच के बैनर तले चल रही थीं मैं भी जागोरी महिला संस्था की कार्यकर्ता होने के नाते जिसका हिस्सा थी। इन गतिविधियों का एक अभिन्न हिस्सा था 'शेयरिंग'। गुजरात दंगा कैंपों में काम करके लौटे साथियों की शेयरिंग। दिल दहला देने वाली घटनाओं की चर्चा और दरिंदगी के शिकार लोगों खासतौर से औरतों और बच्चों की दर्दनाक हालतों के विवरण ने हमारी भूख, प्यास और नींद सब कुछ छीन लिया था। कई शामें हमने घंटों रोकर बितायीं कि इंसान के रूप में ये किस नस्ल के इंसान निकले जिन्होंने दूसरे इंसान को ऐसी निर्ममता से नोचा खसोटा, क़त्ल किया और लाशों के ढेर लगा दिये?

ऐसी ही मायूसी, दर्द और आहत हुई मानवीयता के माहौल में मेरी मुलाकात खुर्शीद साहब से हुई थी। उस दौर में साथ खड़े होने वाले लोगों में कोई भी ऐसा न होगा जो खुर्शीद अनवर को न जानता हो। अमन एकता मंच की गतिविधियों में अपना जीवन, समय और ऊर्जा पूरी तरह से झोंक देने वालों की सूची में अनवर साहब भी एक थे। गतिविधियों के आयोजन की तैयारी से लेकर गुजरात के रिलीफ कैंपों में जाना, हज़ारों की संख्या में रिलीफ कैंपों में रहने वाले लोगों के लिए इकट्ठा किये गये सामानों को बांटना, उनके बीच रहकर महिलाओं, बुजुर्गों, बच्चों का हौसला अफजाई करना, उनके साथ हुए वाकये को संवेदनशीलता से सुनना, लिखना, केस

खुर्शीद एक बेहतरीन प्रशिक्षक के साथ ही एक प्रखर लेखक, अनुवादक, वक्ता और उम्दा पाठक थे। हिंदी और उर्दू साहित्य के प्रेमी को फिल्म जगत की भी गहरी जानकारी थी। मज़ाक में मैं उन्हें 'चलता फिरता मायापुरी' भी कहा करती थी। गाना न गा पाने के बावजूद गाने की उनकी ललक दोस्तों की महफिल में अक्सर हँसी का कारण बन जाया करती थी। खाना बनाने और खिलाने का शौकीन और इन सबके बीच एक अकेला इंसान जिसके लिए दोस्त ही उसका परिवार थे। एक दोस्त की हैसियत से खुर्शीद के साथ किसी का भी आत्मीय हो जाना बड़ा सहज था। खुले विचारों वाला, कूपमंडूक धारणाओं को चुनौती देने वाला, संवेदनशील और बड़े दिल वाला आदमी। सबको अपना बना लेने वाला शख्स। खुर्शीद होते तो 'जी' लगाने पर बड़ी डांट पड़ती, सख़्त हिदायत थी या फिर दोस्त होने की शर्त कि नाम के साथ 'जी' का पुच्छला नहीं चलेगा। उन्हें इस पर बेहद एतराज़ था इसलिए असहज होने के बावजूद जी कहना छोड़ा। अपने नाम की तरह ही खुर्शीद यानी सूरज कईयों के जीवन में रोशनी कर गये ये कहने वाले बहुत हैं मगर अपनी तपिश भरी लेखनी और तेज़ ज़बान से उन्होंने कईयों की नींद हराम कर रखी थी। लीक से हट कर सोचने, करने और जीने की हुनर वाली शख्सियत उनकी पहचान थी।

मगर इस सबके बावजूद 18 दिसंबर की उनकी आत्महत्या की घटना सभी को भीतर से हिला गयी। बहुत सारे 'क्यों' हैं जिनका जवाब कभी नहीं मिलेगा। मगर एक दोस्त होने के नाते हमेशा मन में सवाल रहेगा कि महीनों से इस मामले पर सोशल मीडिया पर डटे रहने, अपने आपको निर्दोष साबित करने की लड़ाई के बाद आखिर उन्होंने यह रास्ता कैसे चुना?

तैयार करना जैसे कई अनगिनत काम थे जिसमें खुर्शीद मुस्तैदी से जुटे रहे। दिल्ली से लेकर गुजरात तक सालों साल दंगा पीड़ित लोगों के बीच काम करते रहना कोई मामूली बात नहीं थी। यहां तक कि बीतते समय के साथ धीमे होते कार्यक्रमों और अमन एकता मंच में घटती लोगों की सँख्या के बावजूद कई अर्से तक खुर्शीद इस बात पर खीज उतारने के साथ इस मंच का परचम संभाले रहे और किसी न किसी रूप में सक्रिय बने रहे।

मानवीय मूल्यों के लिए समर्पित यह ज़ज्बा 2002 से कहीं पहले का था। सालों विभिन्न संस्थाओं में सामुदायिक क्षमतावर्द्धन का काम और प्रशिक्षण, बाबरी मस्जिद गिराने के बाद भड़के सांप्रदायिक दंगों के बीच सांप्रदायिक सद्भावना पर ज़मीनी काम और लेख लिखना जारी रहा। उनकी सोच और कलम का तीखापन महिलाओं के ख़िलाफ़ हिंसा, कट्टवाद के विरोध और कई सामाजिक मुद्दों में दिखाई देता है। काम के अनुभव और उम्र का बहुत फासला होने के बावजूद हमने सह-प्रशिक्षक के रूप में कई कार्यशालायें कीं। इन कार्यशालाओं के दौरान मेरा निजी अनुभव बहुत सकारात्मक रहा है, उन्होंने कभी भी अपने अधिक अनुभव और उम्र का रौब नहीं जमाया, मेरी खुद की महिला मुद्दों पर काम के अनुभव और जानकारी का सम्मान किया। कार्यशालाओं के दौरान किसी मुद्दे की तह दर तह खोलना और उसका विश्लेषण उनके बहुआयामी विषयों पर उनकी गहरी जानकारी और धैर्य का परिचय देता था। हाथ में कलम और सामने प्रशिक्षण बोर्ड होते ही वह शख्स कोई और ही हो जाता था, विषय पर मज़बूत पकड़, सटीक तर्कों की लड़ी और कट्टर विचारों की चुटकी लेने की उनकी शैली सहभागियों की मजबूत भागीदारी बनाये रखती थी।

. . . .

लाइफ और फैसलों में भी डेमोक्रेसी

■ नीरज

खुर्शीद सर जिनसे मैं पहली बार 2005 में मिला। मैं जॉब के लिए अपॉइंट हुआ। पर सर द्वारा यहां पर घर जैसा माहौल पाया। कभी लगा ही नहीं कि ऑफिस जैसा। सर के द्वारा जो बात कही जाती थी चाहे वह डेमोक्रेसी हो या जेंडर बैलेंस वो उनकी लाइफ और फैसलों में देखने को मिलती थी। उन्होंने सबकी क़ाबिलियत और ज़रूरत का ध्यान रखा। मुझे अचंभा तब होता था जब वो बिना बताए सब समझ लेते थे। वैसे तो सर की हर बात याद आती है पर उनमें से एक बात जो हमेशा याद आती है कि मैच के अगले दिन उस पर बात करना। सर हमेशा अपनी बात को अच्छे से समझाते थे और कभी भी कितना गुस्सा हो हमें कभी नहीं डांटते थे। सर के बारे में लिखना तो बहुत चाहता हूं उन सबको शब्दों में नहीं ढाला जा सकता।

ऐ शरीफ़ इन्सानो

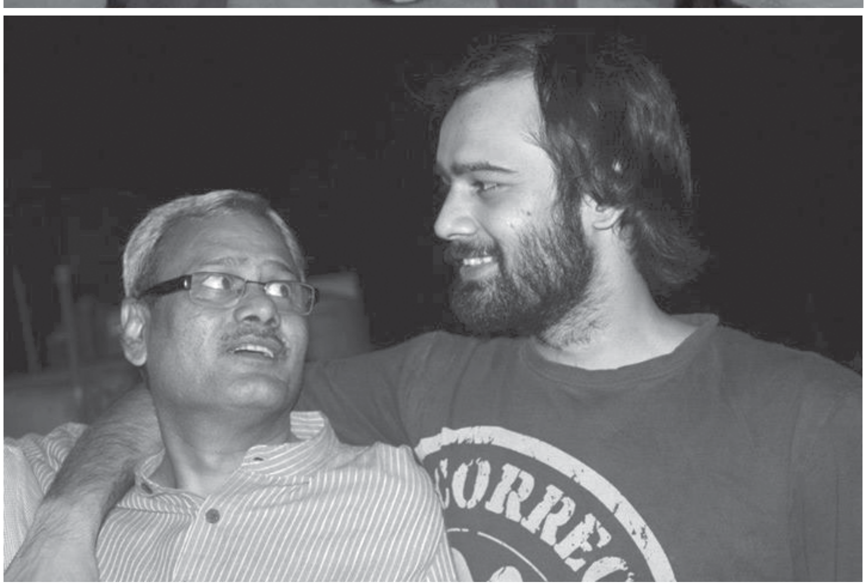

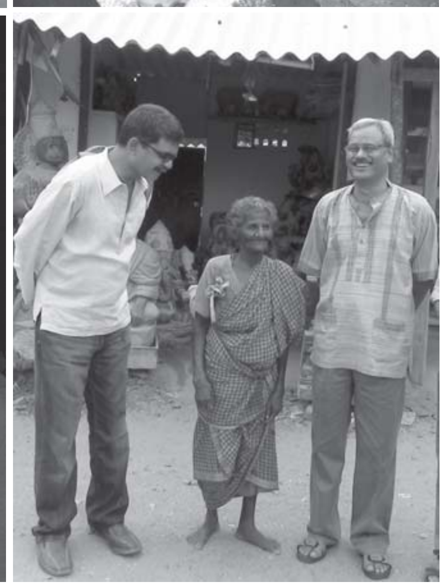

उस गुनाहगार दोस्त की याद में एक कोलाज

■ सुभाष गाताडे

मरने के बाद कफ़न भी नहीं हुआ नसीब
कौन एतबार करे तेरे इस शहर का

टेक्नोलॉजी की तरक्की अब आपसी अन्तर्क्रियाओं को न्यूनतम करती जा रही है। उस दिन भी मोबाइल पर पहुँचने वाले एक अदद सन्देश ने उस विचलित करने वाली ख़बर को पहुँचाया था।

कुछ दिन पहले ही उससे लम्बी गुफ्तगू हुई थी।

बाँगलादेश के ऐतिहासिक शाहबाग आन्दोलन पर पुस्तिका के बारे में बात चली थी, आने वाले चुनावों के मद्देनज़र मोदी राष्ट्र में दलितों की हक़ीकत पर एक लम्बा आलेख तैयार करने के मेरे प्रस्ताव पर उसने हमेशा की तरह तत्परता से हामी भरी थी। शाहबाग पर पुस्तिका प्रेस में जाने वाली थी। एक दिन पहले आई एस डी के साथी सुरेन्द्रजी ने कुछ प्रूफ की गलतियों को लेकर फोन भी किया था।

और दूसरे दिन ग्यारह बजे के आस-पास उस सन्देश ने अचानक गोया शीतनिद्रा से जगा दिया था।

'ख़ुर्शीद इज नो मोर।'

कैसे हुआ ? क्यों हुआ ?

. . .

आमतौर पर किसी बेहद आत्मीय के गुजर जाने के बाद कुछ दिन तक मन सुन्न रहता है, उस व्यक्ति के साथ बीते तमाम अनुभव याद आते रहते हैं और धीरे-धीरे यह एहसास गहराता जाता है कि अब वह व्यक्ति दुनिया में नहीं है। जिन्दगी की रफ्तार ऐसी हुआ करती है कि सब विस्मृत होता जाता है, घाव भरते जाते हैं।

ईमानदारी की बात है कि उसके न रहने पर अब तीन महीना गुजरने को है, मगर ऐसा दिन शायद ही बीता हो कि उसके न रहने की बात दिल से निकल पायी हो। यह शायद इसी वजह से है कि उसके न रहने के खास हालात रहे हैं।

. . .

अब जबकि ख़ुर्शीद के न रहने के लम्बे अन्तराल के बाद लिखने बैठा हूँ तो पहले ही चन्द बातें साफ कर दूं :

- मेरा यह लिखना किसी भी तरह से ख़ुर्शीद के कथित अपराध को सैनिटाइज करने की अर्थात उसका साफ-सुथराकरण करने की कोशिश न समझा जाए। जैसा कि बार-बार कहा जा रहा है कि इस मामले की पूरी तहकीकात होनी चाहिए ताकि सच्चाई सामने आ सके।
- बेहतर होता कि इस मामले की शिकायतकर्ता अपने मामले को लेकर तत्काल पुलिस के पास जाती और मामले के सार्वजनिक होने के पहले ही इस मामले की जांच होती। शिकायतकर्ता से मेरी पूरी हमदर्दी है जिस पर इस पूरे प्रसंग में लांछन लगाने या उस पर दबाव डालने की कोशिश चली है। ऐसे तमाम फेसबुक वीर जिन्होंने ऐसी हरकत की

है, उनकी जितनी भर्त्सना की जाए, उतनी कम है।

- इस पूरे मामले में शिकायतकर्ता जिस नारीवादी कार्यकर्ती के पास सबसे पहले गयी, जिसने - उसे कानून का सहारा लेने की सलाह देने तथा इसके लिए उसे मदद पहुँचाने के बजाय - स्वयंभू मुंसिफ बन कर पूरी बातचीत को रिकॉर्ड किया और उसे सार्वजनिक होने दिया, उसकी हरकत शरारतपूर्ण कही जा सकती है। इस बात को मद्देनज़र रखते हुए कि खुर्शीद हर तरह की साम्प्रदायिकता की मुखालिफत करते थे और उपरोक्त नारीवादी कार्यकर्ती हाल के समयों में आज़ाद भारत के पहले आतंकी नाथूराम गोडसे तक की हिमायत करते हुए देखी जा सकती है, इसलिए इस पूरे प्रसंग में उसे 'क्लीन चिट' नहीं दी जा सकती है।
- निश्चित ही इस पूरे मामले में सबसे आपराधिक भूमिका में इलैक्ट्रानिक मीडिया के वे अति उत्साही चैनल नज़र आते हैं, जिन्होंने अपनी टीआरपी रेटिंग बढ़ाने के मकसद से इस प्रसंग में अपना 'फैसला' सुना दिया, जिसकी परिणति खुर्शीद की असामयिक मृत्यु में हुई। यह अपेक्षा की जाए कि उन पर सख्त कार्रवाई हो ताकि आइन्दा किसी खुर्शीद को - कानून की तमाम प्रणालियों को ताक पर रख कर - दोषी न करार दिया जाए और चैनलों के कर्णधार गिद्धनुमा अन्दाज़ में नए शिकार की तलाश में न निकल पड़े।

. . .

बहुत बड़ी मानवीय आपदाएं या मानवनिर्मित विपदाएं कई बार हमख़याल लोगों को करीब लाती दिखती है।

2002 का जनसंहार, जो अपने राजधर्म से च्युत प्रमुख के कारण मुमकिन हो सका और जिसने राष्ट्रीय नहीं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर निन्दा एवं भर्त्सना के स्वरों को मुखर किया था, ऐसा ही दौर था जब ऐसे तमाम लोग एक दूसरे के सम्पर्क में आए जो कौमों के बीच नफरत नहीं बल्कि आपसी सद्भाव, आपसी साझापन की बात करते थे। इन्हीं दिनों दिल्ली के इन्साफ पसन्द लोगों की बेहद प्रतीकात्मक सी लगने वाली साझी कोशिशें 'अमन एकता मंच' के रूप में आगे बढ़ी थीं। मंच के बैनर तले जंतर मंतर पर चल रहे धरने में खुर्शीद से पहली मुलाक़ात हुई थी और नज़दीकी बनती गयी थी।

धरना, सभाएं, राहत सामग्री जुटा कर भेजना और खुद जाकर गुजरात के तमाम जनसंहार पीड़ितों से मिलना, उनके दुख दर्द बाँटना, या वहाँ के हालात पर कोई रिपोर्ट तैयार करना, तरह तरह के प्रयास जारी थे।

इसी के तहत एक बड़ी सार्वजनिक सभा राजेन्द्र भवन में भी रखी गयी थी। मुझे याद है कि कुछ माह पहले इन्तक़ाल हुए मशहूर फिल्म अभिनेता फ़ारूक शेख भी उस सभा में मौजूद थे और एक कुर्सी पर बैठ कर चुपचाप नोट्स ले रहे थे। गुजरात के वालजीभाई पटेल, जो गुजरात में दलित पैंथर के संस्थापक सदस्यों में से रहे हैं, उन्होंने इस सभा में विस्तार से गुजरात में आकार ले रहे हिन्दु राष्ट्र में दलितों की स्थिति को उजागर किया था, उन्होंने इस सच्चाई को भी उजागर किया था कि दलितों का एक हिस्सा हिन्दुत्ववादी संगठनों के साथ शामिल होकर अल्पसंख्यक विरोधी हिंसा में भी शामिल रहा है और यह भी बताया था कि अम्बेडकरी चेतना से लैस एक हिस्से ने किस तरह लगातार अपने आप को जोखिम में डाल कर ऐसी कार्रवाइयों की मुख़ालिफत की है।

2002 के गुजरते-गुजरते 'अमन एकता मंच' की मीटिंगें, गतिविधियाँ कम होती गयी थीं। एक आख़िरी बड़ी मीटिंग दिल्ली के एक चर्चित शिक्षा संस्थान के हॉल में हुई थी। इसमें अपनी कार्रवाईयों की समीक्षा करने से लेकर आगे क्या-क्या काम मुमकिन है, उस पर बेलाग-लपेट बात चली थी।

वह 2003 का उत्तरार्द्ध था जब हम कुछ लोग सीपीआई के दफ्तर में मिले थे। खुर्शीद के अलावा आदित्य निगम, अपूर्वानन्द, योगेन्द्र यादव, शबनम हाशमी तथा कुछ अन्य लोग भी थे। हमारी चिन्ता 2004 के आसन्न चुनावों को लेकर थी, जब यही संकेत मिल रहे थे कि अटल बिहारी फिर एक बार सत्ता पर क़ाबिज़ होने वाले हैं। इसी स्थिति पर विचारविमर्श के लिए हम जुटे थे। योगेन्द्र यादव - जो उन दिनों मीडिया पर्सनालिटी के तौर पर अधिक मशहूर थे - से हम लोगों ने पूछा था कि क्या मीडिया के अन्दर के सेक्युलर हिस्से को कुछ प्रभावित किया जा सकता है ? उन्होंने इस मसले पर अपनी राय दी थी।

ऐसा संयोग था कि इस मीटिंग के शुरू होने के कुछ देर पहले ही मैं और खुर्शीद दोनों पहुँचे थे। अभी बाकी लोग आए नहीं थे। और निजी ज़िन्दगियों को लेकर गुफ्तगू चल रही थी। खुर्शीद ने अपने बेटे समर के बारे में बताया था - जो उन दिनों स्कूल में था - और यह भी बताया था कि किस तरह उस जगह की - जहां हम लोग बैठे थे - उसकी ज़िन्दगी में खास

अहमियत है। उसके मुताबिक मीनाक्षी के साथ उसकी पहली मुलाकातें उसी परिसर में हुई थीं।

2004 के बाद हम दोनों का मिलना बहुत कम हो गया। आप कह सकते हैं कि साम्प्रदायिकता का जो खतरा पहले अपने आक्रामक रूप में मौजूद था, उसके कम होने का कारण हो सकता है या अपनी-अपनी ज़िन्दगी की मसरूफियतें हो सकती है, मगर यह सही है कि 2002 के बाद लगभग दो साल तक जितनी संलग्नता रही थी, वह नहीं रही। इसका मतलब यह नहीं था कि हमारी बातचीत नहीं होती थी।

उन दिनों गोरखपुर में भाजपा के सांसद योगी आदित्यनाथ की अगुआई में चल रही सरगर्मियां ज़ोरों पर थी, जिन्होंने पूर्वी उत्तर प्रदेश के उस हिस्से में अन्तरसामुदायिक तनावों को बढ़ावा दिया था और उसी को लेकर एक आलेख मैंने लिखा था, जो कई मित्रों के साथ शेयर किया था। एक दिन बाद ख़ुर्शीद का फोन आया कि इसे क्यों नहीं और लम्बा कर देते ताकि इसे एक पुस्तिकाकार दिया जा सके। उसी सलाह से तैयार हुई थी 'योगी परिघटना' शीर्षक से पुस्तिका, जिसको लेकर मिली तीखी प्रतिक्रिया की झलक देते हुए चन्द पत्र भी उसने मेरे घर के पते पर पोस्ट किए थे। मेरे फोन करने पर उसने कहा था कि वह तो महज़ बानगी थी, हमारे यहां कई पत्र आए हैं।

दो साल बाद जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में स्त्री मुक्ति के प्रश्न पर काम करने वाले साथियों ने दिसम्बर माह में 'स्त्री सम्मान दिवस' का कार्यक्रम रखा था, जिसमें प्रख्यात लेखक मुद्राराक्षस तथा सुश्री रमणिका गुप्ता भी शामिल हुई थीं। वर्ष 2002 से उन्होंने इस सिलसिले को शुरू किया था, जब डॉ. अम्बेडकर की अगुआई में हुए महाड सत्याग्रह की 75 वीं सालगिरह मनायी गयी थी। मालूम हो कि दो चरणों में हुए इस सत्याग्रह में 19-20 मार्च 1927 को दलितों के लिए वंचित रखे गए महाड के चवदार तालाब पर सत्याग्रह किया गया था, जब हज़ारों की तादाद में लोगों ने वहां जाकर पानी पिया था। सत्याग्रह के दूसरे चरण में जो 25 दिसम्बर 1927 को आयोजित हुआ था, क्षेत्र के सवर्णो ने इस सार्वजनिक तालाब को निजी दिखा कर दलितों को वहाँ पहुँचने से रोकने के लिए अदालती आदेश ले रखा था। तब डॉ. अम्बेडकर की अगुआई में मनुस्मृति दहन का आयोजन किया गया था। टेफला ऑडिटोरियम में हुए इस कार्यक्रम में सबसे आखिरी कतार में ख़ुर्शीद आकर बैठा था।

'योगी परिघटना' से पुस्तिकाओं के प्रकाशन का शुरू हुआ सिलसिला फिर विभिन्न रूपों में लगातार जारी रहा।

जनवरी 2012 को मैं किसी बैठक के सिलसिले में पुणे गया था, वहां अचानक फोन की घंटी खनकी। 'अमा, गुजरात के दस साल पूरे हो रहे हैं, सोच रहे हैं कि एक पुस्तिका का प्रकाशन हो। कुछ लिखोगे।' मैंने तत्काल अपनी सहमति दर्शायी थी। बात अदद लेख की हुई थी, मगर मेरा आलेख इतना लम्बा हो गया कि उसकी अलग पुस्तिका प्रकाशित की गयी।

2013 के वर्ष में मेरा साबिका एक अलग ख़ुर्शीद से पड़ा जब इस्लामी कट्टरपंथ की तीखी आलोचना करते हुए उसके आलेख जनसत्ता में प्रकाशित होने लगे। एक सकारात्मक पक्ष यह था कि उसमें बहुसंख्यक साम्पद्रायिकता के साथ अल्पसंख्यक साम्प्रदायिकता की, सउदी अरब के रास्ते इस क्षेत्र के मुसलमानों में जड़ जमा रहे इस्लाम के ख़ास रूप की भी तीखी आलोचना होती थी। दो बार ऐसा हुआ कि उसके लेख प्रकाशित हुए तब मैंने झट् से फोन किया और उसे बधाई भी दी थी। मेरी ख़्वाहिश थी कि कुछ और लेख प्रकाशित होने पर उसे कह दूं कि अब पुस्तिका के रूप में उन्हें संकलित कर दो या नए सिरे से कोई पुस्तिका या किताब लिख दो।

ज़ाहिर है इस मोर्चे पर कई मित्रों को ढेर सारी उम्मीदें थीं।

. . .

ख़ुर्शीद अब इस दुनिया में नहीं है।

अपने मोबाइल से मैं उसका फोन नम्बर डिलीट करने का साहस जुटा नहीं पाया हूँ।

मन भी कितना पागल होता है।

लगता है कि अल्लसुबह फोन की घंटी खनकेगी और उस पार से अपने बेतकल्लुफ़ अन्दाज़ में ख़ुर्शीद बोल उठेगा 'अमा, हमारे वक्त़ के नीरो के मुल्क के वज़ीरे आज़म बनने के चर्चे हैं। कुछ गुफ्तगू कर ली जाये उसे लेकर।'

. . .

मानवीय मन भी बड़ा अज़ीब होता है।

कभी-कभी अपने रक़ीबों को लेकर भी हमदर्दी के साथ सोचने लगता है।

आज मैं सोचता हूँ कि मेरे किसी रक़ीब पर भी यह नौबत ना आए कि उसका कोई अज़ीज़ गुज़र जाए और हालात ऐसे हों कि उसका समूचा रूदन अन्दर ही अन्दर घुमड़ता रहे।

अलविदा दोस्त !

हवाएँ इस कदर चलीं कि खिराजे अक़ीदत भी पेश न कर सके।

तुम्हारे जाने के ग़म का सियापा भी न कर सके।

ख़ुर्शीद : एक सच्चा लोकतांत्रिक व्यक्तित्व

■ **सुमन केसरी**

ख़ुर्शीद...

ख़ुर्शीद - यह नाम ज़ेहन में आते ही एक साथ एक उदास आँखों और मनमोहक मुस्कान वाले चेहरे के अक्स के साथ 17 दिसंबर 2013 की रात 10 बजे के करीब सुनी वो गूंजती-सी मन की गहराइयों में उतरती आवाज़ और वह आखिरी बात याद आने लगती है...

"भौजी! कभी मीनाक्षी से पूछिएगा कि मैंने उसकी मर्जी के बिना उसकी उंगली भी छूई हो!"

ख़ुर्शीद - जिसने इन मानीखेज शब्दों को बोलने से पहले कहा था, "अभी तो और भी बहुत कुछ सुनेंगी भौजी...अभी तो यह शुरुआत है...लोग जाने क्या-क्या तोहमत लगाएंगे...पर मैं लड़ूंगा...मैं जीतूँगा!"

छूटते ही मैंने कहा था, "मुझे आप पर पूरा विश्वास है...मैं आपके साथ हूँ..."

ख़ुर्शीद, आपने लड़ाई का जो तरीका चुना वह इतना अनपेक्षित रहा कि क्या कहूँ आपसे - अब इतना भर कि वह लड़ाई अब मेरी - हमारी लड़ाई है... एक बृहत्तर लड़ाई है जो कई अर्थ-संदर्भों में खुलती है।

पर उससे पहले ख़ुर्शीद का मेरे जीवन में होने का अर्थ...

यूँ तो ख़ुर्शीद जेएनयू के उसी सेंटर के विद्यार्थी थे जहाँ मैंने शिक्षा पाई थी। उनके बारे में पुरूषोत्तम बातें भी करते थे पर मेरा ख़ुर्शीद से विधिवत् परिचय सन् 1993 के आस-पास तब हुआ जब वे गंगा वार्डन फ्लैट में आए और ऋत्विक-ऋतंभरा की दोस्ती उनके बेटे समर से हुई। इस आदमी से मिलते ही लगा कि खरा सोना देख रही हूँ मैं। मस्त-बेपरवाह पर वंचितों, उपेक्षितों और खासकर स्त्रियों के प्रति करूणा भाव और कॉमरेड भाव से भरा हुआ। मस्ती में भी मजाल जो औरतों के लिए कोई हल्की बात मुँह से निकल जाए! इसके साथ ही ख़ुर्शीद सच्चे और समर्पित कॉमरेड की तरह, स्त्रियों के लिए आगे बढ़ने, उनकी रचनाशीलता को सामने लाने का काम सतत भाव से करते रहे। मुझे पता भी न चला और "हम सबला" में मेरी कविताएँ छप गईं। जब जिक्र किया मैंने तो वही सलज्ज मुस्कान, "आपकी कविताएँ हैं ही ऐसी कि चाहता हूँ कि ज्यादा से ज्यादा लोग और खासतौर से औरतें इन्हें पढ़ें..."

ख़ुर्शीद - एक ऐसी गोद जिसमें एक माँ अपनी नन्हीं-सी लगभग दुधमुँही बच्ची को घंटों के लिए बेखौफ़ छोड़ जाती थी, इस विश्वास के साथ कि बच्ची उन हाथों से वो सब भी खा लेगी जो वह माँ के हाथों से भी नहीं खाती मसलन रोटी-सब्जी, मिठाई या फल!

ख़ुर्शीद जो, उन दिनों जब कंप्यूटर अभी घर-घर की चीज नहीं बना था तब अपना नया कंप्यूटर 8-9 साल के एक बच्चे को थमा देंगे, इस बात से उद्विग्न हुए बिना कि कंप्यूटर खराब भी हो सकता है!

ख़ुर्शीद - जिसके साथ जवान-जहान लड़कियाँ इतने निश्चिंत भाव के साथ काम करती थीं गोया कि वे अपने ही घर में काम कर रही हों और जगह-जगह हुई मीटिंगों आदि की तस्वीरें फेसबुक पर लगाती - लाइक करती थीं।

ऋतंभरा, वही बच्ची जिसे ख़ुर्शीद ने गोद खिलाया था, जो अब बच्ची से

ख़ुर्शीद से विधिवत् परिचय सन् 1993 के आस-पास तब हुआ जब वे गंगा वार्डन फ्लैट में आए और ऋत्विक-ऋतंभरा की दोस्ती उनके बेटे समर से हुई। इस आदमी से मिलते ही लगा कि खरा सोना देख रही हूँ मैं। मस्त-बेपरवाह पर वंचितों, उपेक्षितों और खासकर स्त्रियों के प्रति करूणा भाव और कॉमरेड भाव से भरा हुआ। मस्ती में भी मजाल जो औरतों के लिए कोई हल्की बात मुँह से निकल जाए!

युवती हो चली है, उसके द्वारा खींची गई अजमेर शरीफ़ की एक तस्वीर, जिसे मैंने फेसबुक पर शेयर किया था, पर कमेंट करते हुए लिखा -

Khurshid Anawr : यह कौन सा दयार है।

Suman Keshari : वापसी में अजमेर शरीफ़ को एक बार फिर देखते हुए... खुर्शीद यह चलती कार से ली गई तस्वीर है... बाहर बारिश आ रही थी जब यह तस्वीर खींची गई। बूंदें दिख रही हैं न सड़क पर।

Khurshid Anawr : चलती गाड़ी से? ऋतंभरा हो गई मन्नू से...

Khurshid Anawr : वह मन्नू ही रहेगी हम लोगों के लिए।

अब ऐसे में कोई बतलाए मुझे कि कुछ लोगों की इस बात पर कि खुर्शीद ने एक लड़की की अस्मत पर हमला किया, मैं कैसे...कैसे विश्वास कर लूँ?

क्या इल्जाम लगाने वालों की बातों पर इसीलिए विश्वास कर लिया जाए क्योंकि खुशीद अकेले रहते थे मस्त और बेपरवाह तरीके से! एक सच्चे लोकतांत्रिक व्यक्ति की तरह, जिसके लिए समाजवाद कोरा नारा न था, न ऊपर पहुँचने की सीढ़ी, वे छोटे-बड़े, अमीर-गरीब, लड़के-लड़कियों में फर्क न करते थे? उनके घर का दरवाजा शुरू दिन से दिसंबर 2013 तक, जब तक वे जीवित रहे सबके लिए खुला रहता था!

क्या इसलिए कि वे मन से रमता जोगी थे, अतः उन पर इल्ज़ाम लगाना आसान था...

या इसलिए कि वे एक बड़े पद पर थे, जिन पर इल्ज़ाम से कुछ तत्वों को लाभ मिल सकता था...

क्या इसलिए कि वे किसी पर भी भूले से भी अविश्वास न करते थे?

क्या इसलिए कि अस्मिताओं के रेखांकन के इस युग में, काल्पनिक या वास्तविक किसी भी "घटना" के संदर्भ में दोषारोपण करना और मंशा निरूपित करना बहुत आसान है। इस आधार पर सिद्धांत निरूपित करना बहुत आसान है और भीड़ इकठ्ठी करना भी। भले ही ऐसा करने से किसी की जान चली जाए पर करने वाले की गोटी तो लाल हो ही जाती है।

सच तो यह भी है कि आज सबको अपनी तथाकथित पक्षधरता सिद्ध करने और गलत-सही किसी भी प्रकार के "आरोपी" से पल्ला झाड़ने या उसे आरोपी साबित कर अपनी क्रांतिकारिता के झंडे गाड़ देने की इतनी हड़बड़ी है कि नाते-रिश्ते सब बेकार साबित हो जाते हैं! कोई रूक कर सोचना नहीं चाहता, क्योंकि किसी को खुद पर ही भरोसा नहीं तो दूसरे पर क्या होगा।

अथवा इसलिए कि वे हर प्रकार की सांप्रदायिकता चाहे वह हिंदू सांप्रदायिकता हो या इस्लामी कट्टरपंथ सब की समान भाव से तर्कपूर्ण ढंग से, तथ्यों के साथ धज्जियाँ उड़ा सकते थे? और उन पर हमला दोनों ही गुटों को सूट करता था क्योंकि दोनों ही प्रकार की सांप्रदायिकता अंततः एक दूसरे को पुष्ट करती है!

ये सवाल हैं मन में!

और सबसे पहले यह सवाल कि जिस लड़की ने उन पर इल्ज़ाम लगाए वह दौड़ कर पुलिस के पास क्यों न चली गई? उसने अपनी मेडिकल जाँच करा के सबूत खुर्शीद को और हमारे मुँह पर क्यों न फेंक दिया? अगर उसका आरोप सही साबित होता तो यक़ीन करें, उस स्थिति में मैं तमाम रिश्तों को भूल कर सच्चाई का साथ देती!

पर... यह एक बड़ा पर है...

पर सच पर तो पर्दा पड़ा हुआ है और पर्दे के ताने-बाने में तो ऊपर लिखी सभी बातों के सूत बुने हुए हैं!

अगरचे खुर्शीद ऐसे न होते यानी कि सही मायने में लोकतांत्रिक मानस वाले व्यक्ति तो शायद उनके साथ यह न हुआ होता। अगर वे "बीमार औरत" को उसके तथाकथित साथियों के पीछे-पीछे घर से बाहर ढकेल देते तो शायद यह न हुआ होता। अगर वे अपने तथाकथित 'दोस्तों' और 'मेन्टॉर' की तरह मोटी चमड़ी के होते या बात-बहादुर होते और कथनी करनी में उन्हीं की तरह दूरी रख दुनिया की निगाह में सुर्खरू होने में माहिर होते तो ऐसा न होता। अरे इतना भी क्यों? अगर वे अपने तथाकथित 'दोस्तों' और 'मेन्टॉर' पर भरोसा न करते और सोशल मीडिया पर लगे इल्जामों पर ध्यान न देते तो भी शायद ऐसा कुछ न होता कि आज हम ये मर्सिया लिख रहे होते।

पर खुर्शीद तो अपने नाम को पूर्णतः चरितार्थ करने वाले व्यक्ति थे बिल्कुल सूरज की रोशनी की तरह पारदर्शी और साफ़ इसीलिए उन्हें सब अपनी तरह भले दिखते रहे और वे सहज ही हार गए अपने ही लोगों से...

खुर्शीद मुझे बस इतना कहना है कि आपके साथ हम सरीखे भी कुछ लोग थे...उन पर कुछ तो भरोसा किया होता आपने, माना कि भरोसे लायक उस पल कुछ बचा न था जिस पल आप धोखों की आग में जल रहे थे!

ऐ लड़की! कभी सोचा तूने कि तेरे इस 'इल्ज़ाम' ने स्त्रियों की लड़ाई को कितना नुकसान पहुँचाया होगा? अब लोग उस अभागी लड़की पर भी विश्वास करने में कतराएँगे, जो सच में किसी पुरूष द्वारा पीड़ित की गई होगी...लोग ऐसी बातों में तो तिरिया चरित देखना चाहेंगे क्योंकि पितृसत्तात्मक समाज के

पुरूषवादी सोच के मनोनुकूल होगी यह बात। इससे वही लोग मजबूत होंगे, जो औरतों को वस्तु के रूप में देखना चाहते हैं। उसे निष्प्राण देह भर मानना चाहते हैं!

यही बात प्रांतीयता के सवाल पर भी लागू होगी...उत्तरपूर्व और ज्यादा दूर होता जाएगा!

जब सोच के दायरे में व्यक्ति नहीं बल्कि अस्मिताएँ प्रमुख हो जाती हैं, तब न्याय की प्रक्रिया धीमी हो जाती है क्योंकि तब न तो न्याय के केंद्र में व्यक्ति रह जाता है और न सजा के केंद्र में। तब सारे सवालों के हल अस्मिता का चश्मा लगा कर ढूंढे जाते हैं...व्यक्ति लहूलुहान पड़ा रह जाता है...अस्मिताएँ उसे रौंदती चली जाती हैं- अपने-अपने फंडे और झंडे उठाए।

मुझे याद आ रहा है वह पल जब मैंने आपके माथे को छुआ था अंतिम बार और आप नेह की गर्माहट भर मुस्कुराए न थे बल्कि निस्पंद पड़े थे, आँखे मींचे...मेरी उँगलियों के नीचे बर्फ-सी ठंढी शिला थी...न ...न ...शिला भी इतनी बेजान, ठंढी नहीं होती, स्पर्श उसे ऊष्मा देती है...शायद...वह बर्फानी ठंढ कभी न उठने वाले की थी। जिसमें अब कभी न वायु का संचार हो सकता था न जल का...न अग्नि का...वह अब मिट्टी थी.... जमीन नहीं...मिट्टी निष्प्राण मिट्टी, जिसका ठंढापन सभी संबंधों की ऊष्मा से परे था...इसीलिए इतना निष्प्राण था...

मेरे लिए यह ठंढापन अबूझ है क्योंकि आपके जाने के बाद मुझमें भी तो कुछ मर गया है, भले ही आप मेरी स्मृतियों में सदा-सदा, जब तक कि मैं हूँ रहते रहेंगे...

मृत्यु एक स्मृति है
जो ले आएगी
उसे मेरे पास
मेरे चाहने भर से
वह है
वह है
जानती ही नहीं
मानती भी हूँ मैं
मैं बस
उतनी भर नहीं
जितना भर वो नहीं रहा

पर...खुर्शीद मेरे लिए आप - प्रथमतः और अंततः व्यक्ति हैं...थे.... कहते हुए कलेजा काँपता है देवरजी!

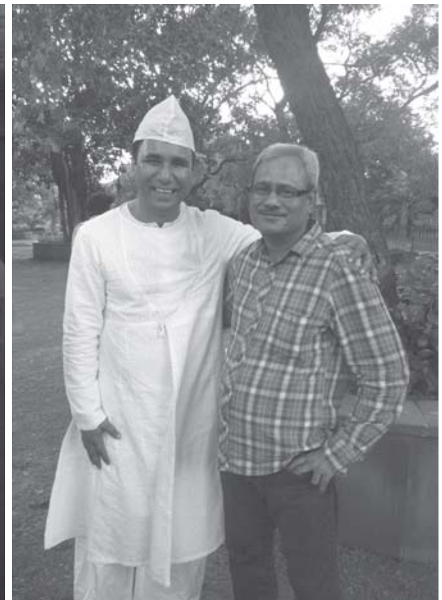

फ़ेसबुक पर ख़ुर्शीद के रंग मेरी नज़र में

■ विभा

'मैं चला तुम्हारे साथ सारी ज़िंदगी मैं अब कहाँ हूँ?
इश्क में डूबा हूँ या साज़िश का हिस्सेदार हूँ।'

◆

"सोमनाथ चटर्जी ने अमरीकी यात्रा यह कर कर करने से मना की थी की सोमनाथ चटर्जी एक व्यक्ति के रूप में किसी हवाई अड्डे पर पूरी तलाशी दे सकता है। मगर लोक सभा अध्यक्ष अध्यक्ष के रूप में ऐसा होने देना पूरे देश का अपमान है। हर राष्ट्रपति ने अपनी पार्टी प्रतिबद्धताओं को अतीत मान लिया। उसके बाद किसी पार्टी का नहीं रहा। फखरुद्दीन अली अहमद ने इमरजेंसी में क्या किया अभी भी राज़ है।

◆

'ठीक यही भारत रत्न के साथ होना चाहिए। अपनी विचारधारा ज़रूर रखिये मगर खुद तक।
गीत जिंदगी भर सुने आपके। और सुनता रहूँगा।'

◆

'तुम साज़िशें रचो। क़लम नहीं रुकेगी। तालिबानी कमीनगी का एक और रंग'

यह क्रूरता कहां से आती है - ख़ुर्शीद अनवर, जनसत्ता 28 अक्तूबर, 2013 : 'धार्मिक कट्टरता जब तमाम सीमाएं तोड़ने लगती है तो सबसे पहले महिलाओं को निशाने पर लेती है। कभी उनका पूरा दमन करके कभी उनको इस्तेमाल करके। जो बातें वेदों में, 'मानस' में कहीं नजर न आएं उनको मनगढ़ंत स्मृतियों में और रोज पैदा होने वाले उपदेशों में देख लें। ताज्जुब है कि इनमें समानता भी बहुत होती है। मसलन, हिंदू मान्यता में धर्मजनित अंधविश्वास कि मासिक धर्म के दौरान महिलाओं के लिए क्या-क्या वर्जित है, इस्लाम में भी देखा जा सकता है। मगर इसे ज्यादा तूल देने के बजाय देखना यह है कि किस तरह धार्मिक कट्टरता पागलपन का रूप लेती है। वहाबियत ने ठीक वही काम किया। हमारे देश में जो हो रहा है उसकी झलक खुद-ब-खुद मिल जाएगी।

आठ अप्रैल 1994 को संयुक्त राष्ट्र ने मानवाधिकारों से संबंधित रिपोर्ट पेश की, जिसमें अफगान तालिबान ने महिलाओं पर जो बंदिशें लगाईं उनकी एक लंबी सूची है। यहां उनमें से कुछ बिंदु पेश किए जा रहे हैं। पुरुष डॉक्टर के पास जाने पर पूरी पाबंदी। सिर से पैर तक बुर्के में ढंके रहना। घर से बाहर काम करने पर पूरी पाबंदी। पुरुष दुकानदारों से सामान न खरीदना। अगर टखने खुले दिख जाएं तो कोड़ों से उनकी पिटाई। उन्हें कोड़े मारना अगर वे तालिबान द्वारा निर्धारित लिबास न पहनें, सार्वजनिक रूप से उनकी पिटाई और गालियां। पति के अलावा किसी अन्य पुरुष से संबंध पर संगसारी करके मार देना। जोर से हंसने पर पाबंदी। रेडियो, टेलीविजन या किसी सार्वजनिक स्थल पर महिलाओं की मौजूदगी पर

पाबंदी। साइकिल, मोटर साइकिल और कार चलाने पर पाबंदी। ईद या अन्य त्योहारों पर या मनोरंजन के लिए महिलाओं के इकट्ठा होने पर पाबंदी। तमाम शीशों की खिड़कियों पर पेंट करवाया जाना, जिससे औरतें बाहर न देख सकें। यहां सारे बिंदु देना संभव नहीं, क्योंकि सूची बहुत लंबी है। यानी महिलाओं को सिर्फ और सिर्फ चलती-फिरती लाश में तब्दील कर देना।

यहां दो तथ्यों का उल्लेख आवश्यक है। पहला यह कि इनमें से अधिकतर शरिया कानून महिला उत्थान की अलंबरदार मानी जाने वाली रब्बानी-मसूद सरकार के जमाने में अफ़ग़ानिस्तान में नाफिज किए गए, जिनके कुछ उदाहरण यहां पेश किए जाएंगे। दूसरी अहम बात यह है कि महिलाओं के लिए बने इन तालिबानी कानूनों का आधार सऊदी अरब के वहाबी आस्था के कानून और स्कूलों के पाठ्यक्रम हैं।

रब्बानी-मसूद सरकार के दौरान महिलाओं पर वहाबी-तालिबानी क्रूरता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि 1978 से मसूद ने सोवियत संघ के खिलाफ जंग छेड़ी और सोवियत संघ के विघटन के बाद गुलबुद्दीन हिकमतयार से जंग के दौरान सऊदी अरब ने सय्याफ और इत्तेहाद-ए-इस्लामी को जब वहाबी विचारधारा को फैलाने के लिए समर्थन दिया तो मसूद ने उसका स्वागत किया और फिर सिलसिला चला वहाबियत की स्त्री विरोधी विचारधारा के अफ़ग़ानिस्तान में प्रसार का, और संयुक्त राष्ट्र में पेश किए गए दस्तावेज में मसूद की भागीदारी की सनद। आठ अप्रैल 1994 को प्रस्तुत इस रिपोर्ट में मसूद सरकार की बड़ी भूमिका थी। औरतों पर जुल्म जो सामने न आया। 1979 से लेकर अगले पांच वर्ष तक उच्च स्तर तक महिला शिक्षा नब्बे फीसद हो चुकी थी। बंदिशों के आने के बाद 1992-93 तक महिला शिक्षा घट कर तीस फीसद हो गई, जबकि इसमें भी वे महिलाएं शामिल हैं जिन्हें शिक्षा 1979 के बाद के पांच वर्षों में मिली थी।

पतियों के जुल्म से केवल हेरात में इस दौरान नब्बे महिलाओं ने आत्महत्या की। (संयुक्त राष्ट्र दस्तावेज) ऊपर से क्रूर मजाक। सीआइए ने मसूद की चे-गेवारा से तुलना की। लेकिन देखिए यही जिहादी तालिबान इन्हीं महिलाओं का इस्तेमाल अपने मकसद के लिए कैसे करते हैं! तालिबानी कारी जिया रहमान ने, जो कुनार और नूरिस्तान (अफ़ग़ानिस्तान) और बाजौर और मोहम्मद (पाकिस्तान) में महिला आत्मघाती दस्ते का प्रशिक्षण शिविर चलाता है, अब तक कई महिलाओं को आत्मघाती हमले में इस्तेमाल किया है। यहां से फरार दो लड़कियों ने इसकी सूचना पाकिस्तान सरकार को दी, लेकिन हमेशा की तरह पाकिस्तान ने कोई कार्रवाई नहीं की। इसके फौरन बाद 21 जून 2010 को कुनार में महिला आत्मघाती हमला हुआ। कारी जिया रहमान ने खुशी का इजहार करते हुए हमले की तस्दीक की। इसके बाद 24 जून 2010 को बाजौर में अगला महिला आत्मघाती हमला हुआ जिसमें चालीस नागरिकों की जान गई। सिर्फ 2010 में पख्तूनख्वा के खैबर सूबे में बमबारी की उनचास घटनाएं हुईं, जिनमें बाजौर (पाकिस्तान) में विश्व खाद्य कार्यक्रम पर हुआ एक महिला आत्मघाती हमला शामिल नहीं है।

◆

लगता है फेस बुक पर ईश निंदा (blasphemy Law) इम्पोर्ट कर लिया गया है। आने वाले दिनों में हो सकता है देश भर के लिए कानून बन जाये। ज़रा सा धर्म के नाम पर फुलझड़ी भी भावनाएं आहत करने लगती हैं। एक काम करते हैं सऊदी अरब से शरिया कानून मंगा कर उसे यहाँ के हिसाब से ढाल लेते हैं। या फिर पाकिस्तान से सेक्शन 295 A, B, C ले लेते हैं। पकिस्तान में तो अनोखी परंपरा है। इस कानून के तहत अभी तक मौत की सज़ा पाने वालों में से 51 तो फांसी पर चढ़ने से पहले क़त्ल हो गए। क्या ज़रूरत है ताम झाम की? सऊदी अरब में पिछले दस साल में दस हज़ार विदेशी सज़ा पा चुके हैं। सऊदी नेशनल का मामला अलग है। मंसूर-अल-नुक़ाय्दान पत्रकार था और इस्माइली मुस्लिम, डॉक्टर हमज़ा अली नास्तिक, हादी मुताईफ़ इस्माइली मुस्लिम, सादिक़ अब्दुल करीम शिया। हाँ इनका किस्सा मज़ेदार है। अदालत ने कहा शिया से वहाबी हो जाओ तो छोड़ दिए जाओगे। बेचारे माने नहीं। सो मारे गए। अब समय आ रहा है हिन्दुस्तान में भी। कल रात रावण पर एक पोस्ट क्या लगा दी लगा ईश निंदा (Blasphemy Law) आ पहुंचा। उस पोस्ट को हटाया इसलिए कि कुछ महिलाओं को बुरा लगा। पर आगे इसकी भी परवाह नहीं करूँगा।

◆

तीसरा मोर्चा कल तक जब गुजरात जल रहा था NDA में बैठे नितीश सांप्रदायिक थे। आज नहीं। रथ यात्रा, 6 दिसंबर 1992, 1993 के दंगों वाले आडवाणी को आज भी नितीश संत मानते हैं। उत्तर प्रदेश अभी भी जल रहा है और मुलायम को क्लीन चिट दे रहे हैं सीताराम येचुरी। अमरजीत कौर...उफ़...

रहनुमा तुम थे कभी मजदूर के तुमको सलाम

◆

मैं चला तुम्हारे साथ सारी ज़िंदगी अब मैं अब कहाँ हूँ?
इश्क में डूबा हूँ या साज़िश का हिस्सेदार हूँ
मैं सियासतदां हूँ या मजनूँ का पैरोकार हूँ
ज़ुल्फ़ के साये में राहत ढूँढता हूँ धूप से
या उसी की आड़ में फ़ितना तो मैं तैयार हूँ
क्या फ़िज़ा है कि रक़ीब-ओ-यार तो हैं हमसफ़र
बेकफ़न मजनूँ है मैं उसका गुनाहगार हूँ

(ख़ुर्शीद अनवर)

◆

अपने कस्बे की अगली कड़ी लिखने बैठा था की राग दरबारी याद आ गया। एक सवाल...शिवपालगंज, भीखमखेड़ा... महिला पात्र न होने पर तो बात हुई है पर एक भी मुस्लिम पात्र न हो...संभव कैसे है अवधी बोलने वाले इलाके में। सुई अटक गयी मेरी। कोई तो मदद करो।

◆

सांप्रदायिक हिंसा में बलात्कार जैसे अहम हिस्सा बन चुका है। मुज़फ्फरनगर हिंसा के बाद आज पांच औरतों ने बलात्कार की रिपोर्ट दर्ज करवायी। कुंवारी लड़कियों को उनके घर वाले रिपोर्ट करने नहीं दे रहे। मगर घटनाएं बड़ी तादाद में हैं।

◆

सिर्फ भ्रम है कि कोई बिना सहारा जी नहीं सकता। ऐसी ग़लतफ़हमी जो इंसान को आत्मनिर्भरता से दूर ले जाती है। दोस्त रहे। महफ़िल रहे। जिंदगी के ग़म और खुशी बाँट लो। मगर उम्मीदें पालना खुद को धोका देना है। सिर्फ शायरी में पत्थर पिघलते हैं। मेरे अंदर का पत्थर तो और भी सख्त हो चला है। हक़ीक़त में नहीं। आज तक किसी ने गम बाँटा नहीं। कितना भी साझा कर लो। कोई दुखी होगा/होगी आपके दुःख से पर आपके दर्द का बोझ नहीं कम कर सकेगा/सकेगी। अपना बोझ तो खुद ही उठाना है।

"तू जो मिल जाये तो तक़दीर निगूं हो जाये/यूँ न था मैंने फ़क़त चाह था यूँ हो जाये" और अगर हो भी जाये तो तक़दीर बदलते वक्त कितना लगता है? खुशियों को बोझ बनने में एक पल भी नहीं लगता। "वह लोग बहुत खुशकिस्मत थे जो इश्क़ को काम समझते थे" फिर भी मेरे दोस्त मेरे सरमाया हैं सबसे बड़ा सरमाया। बस बिना शर्त, बिना अपेक्षा के उनकी महफ़िल चाहिए, उनका साथ चाहिए। बिना शर्त, बिना अपेक्षा के मेरी आज़ादी और उनकी आज़ादी के साथ। मेरी कमियों और उनकी कमियों के साथ। हाँ कमियों में धर्म, जाति, लिंगभेद लेश मात्र बर्दाश्त नहीं। अब बाँहें फैली हैं मेरी बस बिना शर्त, बिना अपेक्षा के। और यह भी दुहरा कर कि सिर्फ भ्रम है कि कोई बिना सहारा जी नहीं सकता। ऐसी ग़लतफ़हमी जो इंसान को आत्मनिर्भरता से दूर ले जाती है।

◆

पहले भी यह शेयर कर चुका हूँ। आज जब की फैसले का दिन है दामिनी पर पुरुषों क्या अपने अंदर झाँकने हिम्मत है? देखें कितने पुरुष आते हैं सामने या फिर यह मान लूँगा कि मैं अकेला हूँ जिसके अंदर "मर्द पला"।

मैंने दामिनी के रेज़ा रेज़ा होने (बलात्कार और हत्या लिखने से कुकर्म की भयावहता का अंदाज़ा नहीं होता) के बाद अपने को खंगालना शुरू किया और खुद को आईना दिखाना चाहा। इसी दौरान मैंने पुरुष और मर्द में अंतर किया था लिहाज़ा पीछे मुड़ कर देखना ज़रूरी समझा कि मैं खुद पुरुष से मर्द कब कब बना। खुद को नंगा करना सरेआम ज़रूरी है।

1. बस स्टैंड पर मैं और मेरी (पूर्व) पत्नी बस के इन्तज़ार में। एक महिला ने तम्बाकू का पान दुकान से खरीदा और एक सिगरेट जलाई।

   ख़ुर्शीद : "बस दारू की बोतल की कमी है"

   घर

   सवाल : हाँ तुमने क्या कहा था "बस दारू की बोतल की कमी है" फिर से बताओ क्या था?

   ख़ुर्शीद की समझ में सब आ गया पर कोई जवाब नहीं।

   प्रतिक्रिया : "मैंने गिने 6-7 पुरुष पान और सिगरेट के साथ उसी समय, उनके बारे में कोई शब्द नहीं निकला तुम्हारे मुंह से।"

   सारी रात मेरी क्लास

2. शादी के तीन दिन बाद ख़ुर्शीद अपनी पत्नी से : please
   "no-not now - Do not feel like."
   "common yaar what is that?"
   "nahi yaar jane do."

ख़ुर्शीद अनवर मुंह फुला कर करवट बदल कर, चिढ़कर सोये।

3. 15 साल पहले तक मैं खुद मादर....बहन.....इस्तेमाल करता था लेकिन 15 साल हो गए अब नहीं।
4. बी.ए. इलाहबाद के मेरे सहपाठी ने एक अनजान लड़की के गले में हाथ डाला और बदतमीजी की। सड़क पर मैं साथ था। मेरी तरफ से न विरोध और ना उस से दोस्ती में फर्क आया।
5. सेक्सिस्ट "चुटकुले" सुनना और खुश होना...पन्द्रह साल पहले तक।
6. जे.एन.यू. में पढ़ने गया। एक साल बीत चुका था... एक लड़की के बारे में किसी ने कहा yaar that flat chested one…ge भी जोर से हँसे

और सिर्फ चंद महीने पहले तेरे तलाक पर बातचीत के दौरान मेरे नजदीकी मित्र 'क्यों दुखी होते हो यार ...औरतें होती ही ऐसी हैं।'

ख़ुर्शीद सिर्फ तीन लफ्ज़ बोले ''जाने दो यार" ...सिर्फ चंद महीने पहले...

मेरे पुरुष के अंदर अभी मर्द छिपा है। और तलाश करूँगा।

कोई शर्मिंदगी नहीं जो कहा ऊपर

कोशिश मर्द को खत्म करने की है। मेरे पुरुष दोस्त बोल कर देखें हल्का महसूस करेंगे।

◆

सीरिया के नौजवानों के हाथ में चमकता यह नारा कह रहा है "संघर्षरत इंसान में और मौक़ापरस्तों में फ़र्क यह है कि संघर्षरत इंसान अपने उसूलों पर क़ायम रहता है जबकि मौक़ा परसत उसूलों को भूल कर अपनी इच्छाओं के पीछे भागता है।"

हमारे इर्द गिर्द भी मौक़ापरस्तों का हुजूम है।

◆

बर्तोल्त ब्रेख्त ने लिखा 'मैं अपने गांव के स्कूल में पढ़ा लेकिन अफ़सोस मैं अपने किसी अध्यापक को कुछ नहीं सिखा सका, सिखा तो मैं भी नहीं सका लेकिन मैंने सीखा... पर किस से यह याद नहीं। अब जो भी गुरु बनना चाहे बता दे। गुरु दक्षिणा भी दूंगा और प्रणाम भी कहूँगा।'

◆

एक मित्र की पोस्ट पढ़ी कि जहाँ भी मुसलमान होते हैं आतंकवाद फैलाते हैं। बहुत देशों के नाम भी गिनाये। मगर साथ में जोड़ दिया 'यहाँ बात ढोंगी मुसलमानों की हो रही है... इस्लाम के सच्चे फॉलोवर्स की नहीं।' मुझे पोस्ट पर कुछ नहीं कहना। एक बात दिमाग़ में आती है।

एक नाम किसी किसी भी धर्म से जो सच्चा मुसलमान या सच्चा हिंदू या सच्चा ईसाई या सच्चा सिख हो। सिर्फ एक नाम।

◆

ईद मुबारक उनमें से किसी को नहीं जिन्होंने किसी शख्स को धर्म, जाति, जेंडर की बुनियाद पर कभी नफरत से देखा हो।

तमाम इंसानियत परस्तों को ईद मुबारक। हर त्यौहार ईद है। क्योंकि सारे त्यौहार इंसान को इंसान से जोड़ते हैं। आज तो ईद है भी। मैंने बाजू फैला रखे हैं। आओ कि गले मिलने के मौके कम आते हैं आज के दौर में। आओ कि तुमसे मोहब्बत है मुझे क्योंकि तुमने इंसानियत का दामन साफ़ बचा रखा है। आओ कि जश्न मनाएं अपने साझेपन का।

◆

क्यों चिढ़ाते हो मित्रो। अभी रोज़ा नमाज़ वाले मेहरबान थे आज तीन जगह से कामरेड लाल लंगोट बजरंगबली का टैग हटाया। मैं सर्वधर्म वाला नहीं निरा अधर्मी हूँ। हाँ ईद पर जिसको दारू पीनी हो आ जाये। माफ़ कर दो वर्ना गरिया दूँगा। इलाहाबादी हूँ।

◆

एक एलान... मेरे इनबॉक्स में जुमा मुबारक, नमाज़, रोज़ा, जैसी बातें न की जायें। मेरे नाम पर न जायें ख़ुर्शीद अनवर का अनुवाद करके आप सूर्यप्रकाश, भानु प्रकाश आदि भी कर सकते हैं पर ख़ुर्शीद अनवर की आदत है और यही मेरी पहचान। धार्मिक बातें मुझे पसंद नहीं। आप जो करना चाहें करें मगर मुझसे न पूछें कि मैंने क्या किया क्या नहीं किया। मैं हर त्यौहार मनाता हूँ होली, दिवाली, ईद, क्रिसमस बिना धार्मिकता के। आप खुले आम मुबारकबाद दें मगर यह जुमा मुबारक, नमाज़ करें। जुम्मा से बेहतर...म्मा।

◆

अरे बाप रे! इन्दौर से लौटा तो नरेंद्र मोदी पर अपनी दो पंक्तियों की टिप्पणी पर चार सौ (अधिकांशतः उग्र) प्रतिक्रियाएं पढ़ने को मिलीं। इस टिप्पणी से पहले मैंने मोदी के पिल्ले वाले रूपक पर जो राय व्यक्त की थी, उग्रता से भरी ढेर प्रतिक्रियाएं उस पर भी। लाइक-साझा तो चलिए निष्पक्ष या अपने पक्ष के मान लेता हूँ। बहरहाल, मजा प्रतिक्रिया की इबारतें पढ़कर आया। क्या तेवर हैं!

अगर अभी से लोग इतने आक्रामक हैं तो नरेंद्र भाई खुदा न ख्वास्ता सचमुच केंद्र पर काबिज हो गए तब?

◆

इस तरह मेरी परेशानियां भी अजब हो गई हैं। कतिपय मार्क्सवादियों के पाखंड पर टीका की तो सुनने को मिला कि सीआइए समर्थक है (अब तो तस्वीर भी संदेह जगाती होगी!) यहाँ तक कहा गया कि बंदा भीतर से संघ-परिवार का प्रतीत होता है! दूसरी तरफ, हिंदुत्व-राग अलापने वालों पर टिप्पणी की तो संघ-परिवार के सिपाहियों से सुनने को मिला है कि पीछे कांग्रेस का सुर लगा हुआ है। किसी समिति की सदस्यता भी गिना दी गई है। काँग्रेस पर जो टीका-टिप्पणी करता आया हूँ, उसे वे क्यों पढ़ने लगे! Khurshid Anwar भाई, ऐसे तो हम कहीं के न रहे! दोनों को खुश रखने का गुर सीखना होगा कहीं से!

◆

यह रंग किसी की जागीर नहीं। और न हरा। छीनो इनसे। कि हमारी जिंदगी बेरंग न हो। हर रंग हमारे हैं। इन्द्रधनुष, सूरज की किरणें। सुबह को रोशन होता आकाश और उसका रंग। शाम की लालिमा। रंग हमारा हिस्सा है अँधेरा उनका जो हमसे रंग छीनना चाहते हैं। संघ हो, जमात हो कालिख पोतो। यह हसीं रंग कब्ज़े में करो।

◆

आखिर आज काम आ ही गयी मेरी नास्तिकता और समुदाय से खुद को न जोड़ना। मैं कुत्ते के पिल्लों की जमात का हिस्सा होने से बच गया। मगर एक इंसान (नहीं अब कैसे इंसान मानूं खुद को. वह तो मोदी हो गए) सॉरी व्यक्ति के बचने से क्या। एक पूरा समुदाय तो कुत्ते का पिल्ला हो गया। मेरे माँ बाप, और भी कुत्ते के पिल्ले की जमात में आ गए। समझ नहीं आता इतने करोड़ पिल्ले मानव समुदाय के साथ कैसे चलेंगे? कोई रास्ता तलाश तो करना होगा। मगर हज़रत गब्बर सिंह कह गए - जो डर गया समझो मर गया। तो पूरा मानव समुदाय और पिल्ले मिलकर इस 'हिंदू राष्ट्रवादी' को इतने इंजेक्शन लगवाएंगे कि आटे की छलनी की ज़रूरत नहीं पड़ेगी इसके किचेन में, हाँ सारे साथ मिलकर। किसी समाज में आज तक अल्पसंख्यकों ने खुद अपनी लड़ाई अपने दम पर नहीं लड़ी। हमेशा बहुसंख्यकों ने हिटलरों को खत्म किया। और इस मुल्क में उनकी संख्या कहीं ज्यादा है। साथ रहे अल्पसंख्यक।

◆

मैं वंदे मातरम पर तरह तरह की टिप्पणी पढ़ रहा हूँ। फतवा, कभी कमेन्ट ...मैं बदबूदार राष्ट्रवादी नहीं। हिन्दुस्तानी हूँ यहाँ रहता हूँ। हमारी साहित्यिक परंपरा में बार बार मादर-ए-वतन, माँ के सामने सर झुकाना आता है. A. R. Rahman का गीत 'माँ तुझे सलाम' वंदे मातरम का ही तो अनुवाद है। सलाम करते हम सर भी झुकाते हैं। आखिर क्या है इसमें। बहुत सीधा प्रश्न है मेरा।

नाकूस से गरज़ न मतलब अजां से है (नाकूस शंख)
मुझको अगर है इश्क तो हिन्दोस्तां से है
(ज़फर अली खां)

यह वंदे मातरम से अलग कैसे?
अय मादर-ए-हिंद सुबह तेरी तेरी शाम
है साकी-ए-दौराँ के छलकते हुए जाम
(फिराक़)

यह वंदे मातरम से अलग कैसे?
कितने गिनाऊँ?

बंकिम से चिढ़ है या अपनी हर विरासत संघियों को सौंप देना चाहते हैं हम

◆

उस लड़की के लिए जो सफदरजंग हस्पताल में मौत को चुनौती दे रही है :

आइये हाथ उठाएं हम भी
हम जिन्हें रस्म-ए-दुआ याद नहीं
हम जिन्हें सोज़-ए-मोहब्बत के सिवा
कोई बुत कोई खुदा याद नहीं

आइये अर्ज़ गुज़रें कि निगार-ए-हस्ती
ज़हर-ए-इमरोज़ में शिरीनी-ए-फर्दान भर दें
वो जिन्हें तबे गरांबारी-ए-अय्याम नहीं
उनकी पलकों पे शब-ओ-रोज़ को हल्का कर दें

जिनकी आँखों को रुख-ए-सुभ का यारा भी नहीं
उनकी रातों में कोई शमा मुन्नवर कर दें
जिनके क़दमों को किसी राह का सहारा भी नहीं
उनकी नज़रों पे कोई राह उजागर कर दें

जिनका दीन पैरवी-ए-कज्बो-रिया है उनको
हिम्मते-कुफ्र मिले, जुर्रत-ए-तेहकीक़ मिले

जिनके सर मुन्तज़िर-ए-तेग-ए-ज़फ़ा हैं उनको
दस्त-ए-क़ातिल को झटक देने की तौफीक़ मिले

इश्क का सर-ए-निहां जां तपां है जिस से
आज इक़रार करें और तपिश मिल जाए
हर्फ़-ए-हक़ दिल में खटकता है जो कांटे की तरह
आज इज़हार करें और खलिश मिट जाए

◆

नज़ीर अकबराबादी (1735-1830)
हर एक मकां में जला फिर दिया दिवाली का
हर एक तरफ़ को उजाला हुआ दिवाली का
सभों के दिल में समां भा गया दिवाली का
किसी के दिल को मज़ा खुश लगा दिवाली का
अजब बहार का है दिन बना दिवाली का

जहाँ में यारों अजब तरह का है यह त्यौहार
किसी ने नक़द लिया और कोई करे है उधार
खिलौने, खीलों, बताशों का गर्म है बाज़ार
हर एक दुकां में चिरागों की हो रही है बहार
सभों को फ़िक्र है अब जा बजा दिवाली का

(तब क्या था अब क्या है...और कब तक...क्यों तो हम सब जानते हैं)

◆

कल ढाका से वापसी। फैज़ ने ढाका से वापसी पर कहा था :

कब नज़र में आएगी बे दाग सब्ज़े की बहार
खून के धब्बे धुलेंगे कितनी बरसातों के बाद

पाकिस्तान और बांगलादेश (और हिंदुस्तान) के प्रतिनिधियों के साथ सांस्कृतिक (भाषाई, संगीत, लोक कलाओं, साहित्य, दस्तकारी आदि) और सामाजिक जैसे अनेक साझा मुद्दों पर कार्यशाला का संचालन करने के बाद इन साथियों में जो अपनत्व दिख रहा है, जिस तरह पाकिस्तान के लोग 1971 की ज्यादतियों पर बांग्ला लोगों से शर्मिंदगी दिखा रहे हैं और सांस्कृतिक संध्या की तय्यारी कर रहे हैं उस के बाद जिस संतुष्टि का एहसास हो रहा है उसके लिए शब्द नहीं मिल रहे। हर एहसास के लिए शब्द शायद होते भी न हों...

◆

आज कुछ दोस्तों से बात हुई। मुस्लिम दोस्त थे। बातों के दौरान मेरे दिमाग में जो चला लेकिन उनसे नहीं कहा ...अरब क्षेत्र रेगिस्तान है ...पानी की कमी इस लिए लोटा (जिसे बदना कहते है) इस्तेमाल हुआ, टोंटी वाला लोटा। समझदारी का काम पानी बचेगा। अब साहब दक्षिण एशिया में इंसान गंगा, पद्मा, सिंध चेनाब में घुसा हुआ दे बदना, दे बदना डुबो-डुबो कर नहा रहा है। अरे यार... अकल का अकाल? मैं मोहम्मद को हुज़ूर कहूँ। महोदय, सरकार, श्रीमान कहूँ तो जूता। अंग्रेजी चल गयी be peace upon him (BPUH) मजाल कोई और भाषा तो भाई अंग्रेजी क्यों। यहाँ ज़रा विरोधभास नज़र आया। जब तक आप दुआ न करें मोहम्मद पर शान्ति की सम्भावना कम होगी। जबकि वह ही आपको शांति देने वाले हैं। मैं नमाज़ अगर पढता होता तो...अवधी में पढ़ता तो खुदा को समझ ना आता? नहीं अरबी जी ...ज़रा ठहरिये बाकी धर्म कर्म चिरकुट नहीं... बिना समझे सारे मन्त्र पढ़ जायेंगे... पंडित अगर शादी पर अंतिम संस्कार के मन्त्र पढ़ा दे तो फूलों की वर्षा कर जायेंगे। माफ कर भाई।

◆

ख़ुर्शीद अनवर : रोशनी की किरण

■ **फ़ैज़ा सलीम**
कराची, पाकिस्तान

उस शख्सियत का नाम ही जैसे उसका परिचय था, जिसे मैंने पहली बार 2005 में ढाका में जाना। विनम्र और निःस्वार्थी इंसान-ख़ुर्शीद अनवर : रोशनी की किरण। सोशल मीडिया और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के मार्फ़त मुझ तक जो पहुँचा उससे मेरा केवल दिल ही नहीं टूटा बल्कि उसने मीडिया को देखने का मेरा नज़रिया ही बदल दिया। ख़ुर्शीद साहब मेरे बहुत प्यारे दोस्त थे, हालाँकि उनसे मिले हुए लम्बा वक़्त गुज़र गया था लेकिन हमारा राब्ता हमेशा कायम रहा। इसकी वजह थी हमारा साझा उद्देश्य- दुनिया में अमन, समरसता और प्यार का प्रसार। उनकी विनम्रता, उनका अध्ययन और अन्याय के ख़िलाफ़ लड़ने की उनकी क्षमता से मैं बहुत मुतास्सिर हुई थी लेकिन मैंने कभी सपने में भी नहीं सोचा था कि मीडिया की ताकत का यह क्रूरतापूर्ण इस्तेमाल जहाँ इन्साफ एक विश्वासघात बन जाता है उन्हें भीतर से इतना तोड़ देगा। इक़बाल की शायरी के लिए उनकी मोहब्बत और छोटी-छोटी चीज़ों पर उनका ख़ुश हो जाना मुझे बहुत याद आता है। थोड़े से वक़्त में ही जितना मैंने उन्हें और उनकी टीम को जाना मुझे महसूस होता था कि वे योद्धा थे और ज़िंदगी से डरते नहीं थे। उनका हमें छोड़ कर जाना भी इसी का बयान करता है। मैं सोचती हूं कि उन्हें अपने लिए इतना कठोर नहीं होना चाहिए था। उनकी आत्मा को शांति मिले! उनका छोड़कर जाना भी तमाम लोगों और दोस्तों को नई दृष्टि से भर गया है जिससे वे उन उद्देश्यों के लिए संघर्ष कर सकें जिनके लिए ख़ुर्शीद साहब जीवनभर लड़े।

. . . .

डॉ. ख़ुर्शीद अनवर हमारे समय की एक महान शख़्सियत

■ **अरशद करीम**
खैबर पख़्तूनख्वाह, पाकिस्तान

डॉ. ख़ुर्शीद अनवर की असामयिक मौत इंस्टीट्यूट फॉर सोशल डेमोक्रेसी (आईएसडी) के लिए एक ऐसा नुक़सान है जिसकी भरपाई कभी नहीं हो सकेगी। ऐसी बहुमुखी प्रतिभा सदियों में एक बार जन्म लेती है। डॉ. ख़ुर्शीद अनवर सच्चे अर्थों में इंसानियत के ख़ैरख़्वाह और आम जन के असली दोस्त थे।

उनकी मौत पूरे उपमहाद्वीप के प्रगतिशील आंदोलन के लिए बहुत बड़ा सदमा है। वे हमारी साझी धरोहर थे। बुर्जुआजी और ज़मींदारों के राज ने षड़यंत्र करके उनकी ज़िंदगी को ख़त्म कर दिया।

डॉ. ख़ुर्शीद अनवर ने शांति के लिए सतत् काम किया। मुझे ढाका के होप सेंटर में ट्रेनिंग के सिलसिले में दो बार 2011 और 2012 में उनसे मिलने का मौका मिला। वे इस उपमहाद्वीप के लोगों के लिए उम्मीद की रौशन शमा थे। हम शांति और उम्मीद के उस परचम को लेकर आगे बढ़ेंगे जिसे एक महान आत्मा ने फहराया था।

HOPE Foundation

ख़ुर्शीद सर के लिए

■ **शाइस्ता**
खैबर पख़्तूनख्वाह, पाकिस्तान

वह चले गए... अब वह इस दुनिया में नहीं रहे। बग़ैर किसी खून के रिश्ते के जिस शख्स ने मुझे पिता कहने का हक़ दिया, वह चला गया। इस साल मैं उन्हें सालगिरह की बधाई देना भूल गयी थी लेकिन फिर मैंने अपने आपसे कहा कि कोई बात नहीं अगले साल मैं उनकी सालगिरह के लिए रिमाइंडर सेट कर दूंगी लेकिन...

मुझे उनका 'बिटिया' कहकर पुकारना बहुत याद आयेगा। जिस ढंग से वह मुझसे बात करते थे वह मुझे बहुत पसंद था। मैं हमेशा सोचती थी कि उनसे और श्रुति से मिलने दिल्ली आऊंगी और हम बहुत सा अच्छा वक़्त साथ गुज़ारेंगे।

मैं सोचती हूं अगर आप मुझे एक बार फिर मिल जाते तो मैं आपसे बता सकती कि आप मेरी ज़िंदगी में कितने ख़ास हैं!

हम आपको हमेशा प्यार करेंगे और याद करते रहेंगे!

आपकी बिटिया

. . . .

एक ख़त ख़ुर्शीद के लिए

■ **लालबहादुर वर्मा**

तुम इस तरह चले जाओगे यह तो न तुम्हारे दोस्तों ने सोचा होगा न दुश्मनों ने। तुम जिस तरह गए उसने दुश्मनों ही नहीं दोस्तों को भी मुल्ज़िम बना दिया है। जिसके दोस्त होते हैं वह क्या ऐसे जाता है। एक बार गोरख ने यही किया था। क्या होता है तुम लोगों में जो तुम्हें इतने सारे लोगों का अपना बनाता है फिर तुम लोग कोई ऐसी लक्ष्मण रेखा बना लेते हो जिसे कोई नहीं लांघ पाता। तुम लोग क्यों इतने नेक होते हो कि अंदर से असुरक्षित हो जाते हो।

कितना विश्वास और आत्मविश्वास था तुममें। विश्वास ज़िंदगी के साझापन पर, आत्मविश्वास अपनी बात पर। नतीजतन जोखिम उठाते चले जाते थे। यह अच्छा था कि तुमने अपनी मासूमियत नहीं छोड़ी। तुम्हारे अंदर का बच्चा बड़ा ज़िद्दी था। वह तुमसे बच्चों जैसे हरकत करवाता रहता था। कभी-कभी बचकानी भी। तुम लाड़ बहुत करते थे, दूसरों के साथ भी और अपने तो लाड़ले थे ही। क्या आत्ममुग्धता छुपाए छुपती है? लगता तो है कि आत्ममुग्धता दूसरों की मुग्धता की मोहताज नहीं होती- पर होती है। तुमने तो यही साबित किया।

क्या कोई दूसरा किसी को बेइज्ज़त कर सकता है? उसी तरह जैसे क्या कोई दूसरा किसी को इज्ज़त दे सकता है? इज्ज़त और बेइज्ज़ती आदमी अगर खुद अपने को न दे तो दूसरा कोई क्या देगा। तुम ऐसे लोगों द्वारा की जा रही बेइज्ज़ती से आतंकित हो गए जिनकी अपनी इज्ज़त बाज़ार में खड़ी है? तुमने कितनों में कितनी उम्मीद जगायी थी और एक झटके में नाउम्मीद कर दिया। हम उन्हें कभी नहीं माफ करेंगे - पर याद तो करते ही रहना पड़ेगा। ऐसे तो तुम थे ही, इतना कुछ तो तुम कर ही गए हो।